प्रेरणा

RNI No. UPHIN/2000/3766 ISSN No. 2581-3528 ₹:20

केशव संवाद

भाद्रपद–आश्विन, विक्रम सम्वत् 2079 (सितम्बर–2022)

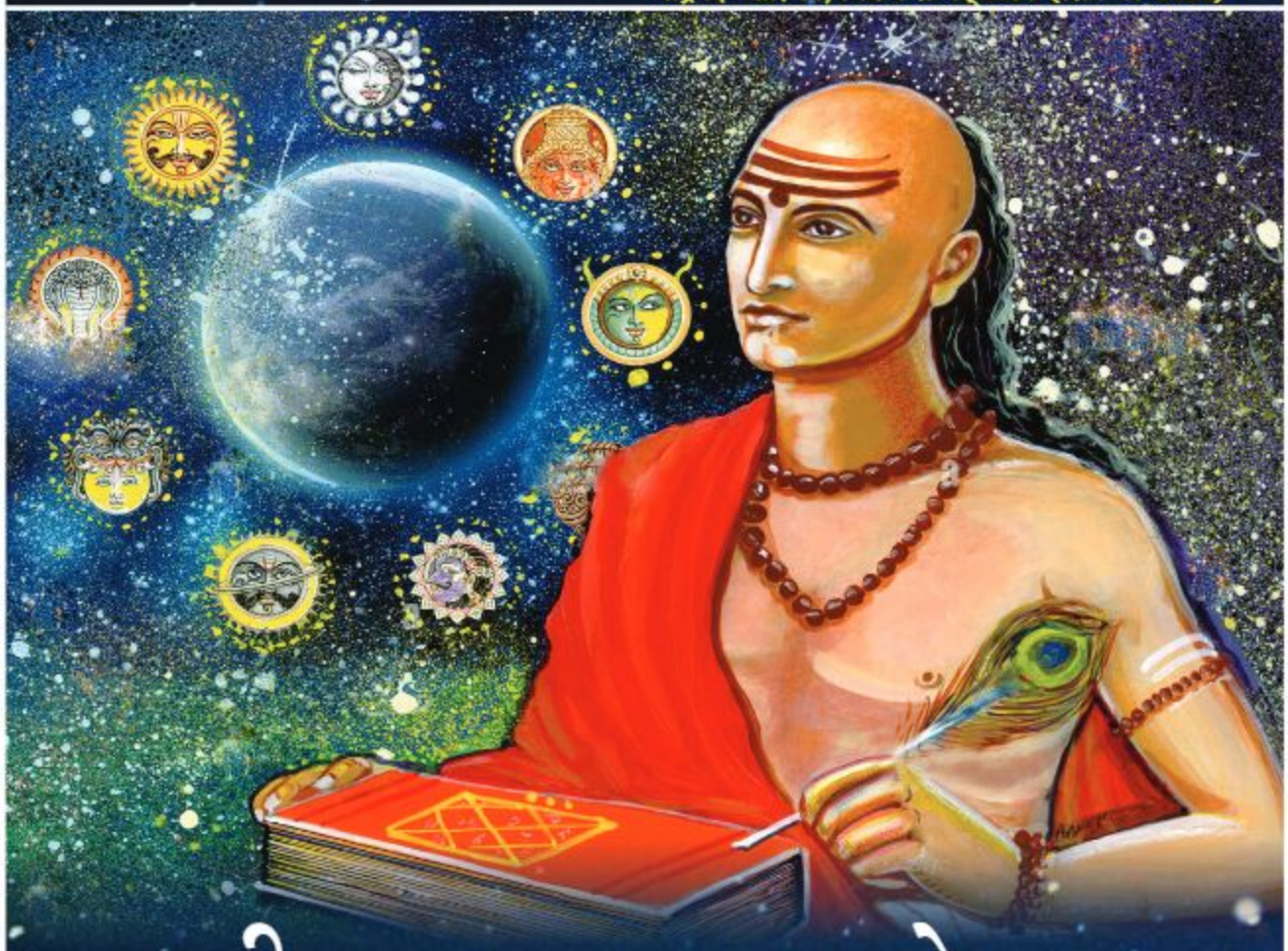

भारतीय ज्ञान परम्परा के नायक

महान भारतीय गणितज्ञ
भास्कराचार्य द्वितीय

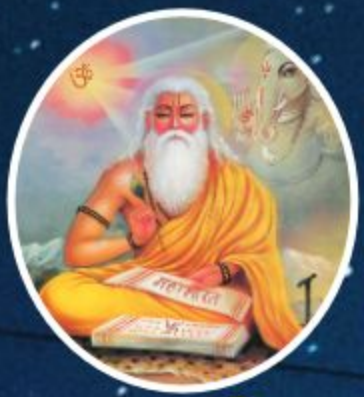

प्रथम गुरु आदि गुरु
आचार्य वेदव्यास

आदिकवि
महर्षि वाल्मीकि

सितम्बर 2022, भाद्रपद-आश्विन, विक्रम सम्वत् 2079
हिन्दी पंचांग

रविवार	सोमवार	मंगलवार	बुधवार	गुरुवार	शुक्रवार	शनिवार
				ऋषि पंचमी 1 भाद्रपद शुक्ल पक्ष पंचमी	2 भाद्रपद शुक्ल पक्ष षष्ठी	3 भाद्रपद शुक्ल पक्ष सप्तमी
श्री राधा अष्टमी 4 भाद्रपद शुक्ल पक्ष अष्टमी	5 भाद्रपद शुक्ल पक्ष नवमी	पार्श्व एकादशी 6 भाद्रपद शुक्ल पक्ष एकादशी	वामन जयन्ती 7 भाद्रपद शुक्ल पक्ष द्वादशी	प्रदोष व्रत 8 भाद्रपद शुक्ल पक्ष त्रयोदशी	अनंत चतुर्दशी 9 श्री गणपति विसर्जन भाद्रपद शुक्ल पक्ष चतुर्दशी	पूर्णिमा श्राद्ध 10 पितृ पक्ष आरंभ भाद्रपद शुक्ल पक्ष पूर्णिमा
11 आश्विन कृष्ण पक्ष प्रतिपदा	12 आश्विन कृष्ण पक्ष द्वितीया	13 आश्विन कृष्ण पक्ष तृतीया	14 आश्विन कृष्ण पक्ष चतुर्थी	15 आश्विन कृष्ण पक्ष पंचमी	16 आश्विन कृष्ण पक्ष षष्ठी	17 आश्विन कृष्ण पक्ष सप्तमी
18 आश्विन कृष्ण पक्ष अष्टमी	सौभाग्यवती श्राद्ध 19 आश्विन कृष्ण पक्ष नवमी	20 आश्विन कृष्ण पक्ष दशमी	इन्दिरा एकादशी 21 आश्विन कृष्ण पक्ष एकादशी	22 आश्विन कृष्ण पक्ष द्वादशी	23 आश्विन कृष्ण पक्ष त्रयोदशी	24 आश्विन कृष्ण पक्ष चतुर्दशी
पितृ विसर्जन श्राद्ध 25 आश्विन कृष्ण पक्ष अमावस्या	नवरात्रि प्रारम्भ 26 आश्विन शुक्ल पक्ष प्रतिपदा	चंद्र दर्शन 27 आश्विन शुक्ल पक्ष द्वितीया	28 आश्विन शुक्ल पक्ष तृतीया	29 आश्विन शुक्ल पक्ष चतुर्थी	30 आश्विन शुक्ल पक्ष पंचमी	

सितम्बर 2022, त्यौहार

01 गुरुवार	ऋषि पञ्चमी	03 शनिवार	ललिता सप्तमी, महालक्ष्मी व्रत आरम्भ, दूर्वा अष्टमी	04 रविवार	राधा अष्टमी
06 मंगलवार	परिवर्तिनी एकादशी	07 बुधवार	वामन जयन्ती, वैष्णव परिवर्तिनी एकादशी	08 गुरुवार	प्रदोष व्रत
09 शुक्रवार	गणेश विसर्जन, अनन्त चतुर्दशी	10 शनिवार	पूर्णिमा श्राद्ध, पितृपक्ष प्रारम्भ, भाद्रपद पूर्णिमा, अन्वाधान	11 रविवार	इष्टि
13 मंगलवार	विघ्नराज संकष्टी चतुर्थी	17 शनिवार	महालक्ष्मी व्रत पूर्ण, विश्वकर्मा पूजा, कन्या संक्रान्ति	18 रविवार	जीवित्पुत्रिका व्रत
21 बुधवार	इन्दिरा एकादशी	23 शुक्रवार	प्रदोष व्रत	25 रविवार	सर्वपित्रू अमावस्या, दर्श अमावस्या, अन्वाधान, आश्विन अमावस्या
26 सोमवार	नवरात्रि प्रारम्भ, घटस्थापना, इष्टि	27 मंगलवार	चन्द्र दर्शन	30 शुक्रवार	उपांग ललिता व्रत

केशव संवाद

RNI No. UPHIN/2000/3766

ISSN No. 2581-3528

सितम्बर, 2022

वर्ष : 22 अंक : 09

अणंज कुमार त्यागी

अध्यक्ष

प्रे. शो. सं. न्यास

संपादक

कृपाशंकर

कार्यकारी संपादक

डॉ. प्रियंका सिंह

संपादक मंडल

डॉ. प्रदीप कुमार, डॉ. अखिलेश मिश्र, डॉ. नीलम कुमारी, प्रो. अनिल निगम, डॉ. मनमोहन सिंह, अनीता चौधरी, अनुपमा अग्रवाल, अमित शर्मा

पृष्ठ संयोजन

वीरेंद्र पोखरियाल

संपादकीय कार्यालय

प्रेरणा शोध संस्थान न्यास

सी-56/20 सेक्टर-62, नोएडा -201301

फोन न. 0120 4565851, 2400335

ईमेल : keshavsamvad@gmail.com

वेबसाइट : www.premasamvad.in

स्वामी पंकज कुमार की ओर से मुद्रक/प्रकाशक सुखवीर प्रकाश द्वारा चंद्र प्रभु ऑफसेट प्रिंटिंग वर्क प्रा. लि. नोएडा से मुद्रित तथा केशव भवन 105, आर्यनगर सूरजकुंड रोड मेरठ से प्रकाशित

इस पत्रिका में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। संपादक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है। सभी विवादों का निपटारा मेरठ की सीमा में आने वाली सक्षम अदालतों/फोरम में मान्य होगा। संपादक

विषय सूची

प्रथम गुरु आदि गुरु आचार्य वेदव्यास	-डॉ. सुनीता शर्मा	05
विश्व की पहली कविता का पहला पुरस्कार!	- डॉ. बुद्धिनाथ मिश्र	06
महान भारतीय गणितज्ञ भास्कराचार्य द्वितीय	-पंकज जगन्नाथ जयस्वाल	08
भारत के महान खगोलशास्त्री वराहमिहिर	- ज्योति सिंह	09
प्रथम योग गुरु	- सिद्धार्थ शंकर गौतम	10
निपुण शिल्पकार और वास्तुकला विशेषज्ञ ...	- मोनिका चौहान	11
आचार्य चाणक्य रचित "अर्थशास्त्र"	- प्रो. अखिलेश मिश्र	12
महान सनातनी चिकित्सक महर्षि चरक	- कुं. चंद्र शेखर सिंह	14
भारत की प्रथम महिला शिक्षिका	- डॉ. प्रदीप कुमार	16
पहली महिला सर्जन : डॉ. मुथुलक्ष्मी रेड्डी	- डॉ. प्रियंका सिंह	17
प्रथम पर्यावरणविद - भारतीय ऋषि मुनि	- डॉ. चारु कालरा	18
साक्षात्कार : रामबहादुर राय	- अनिता चौधरी	20
प्राचीन ज्ञानपीठ वल्लभी विश्वविद्यालय	- प्रो. (डॉ.) हरेन्द्र सिंह	22
शिक्षक दिवस	- राम कुमार शर्मा	24
राजनीति में राष्ट्रीय विकास की समग्रता का अभाव	- प्रो. अनिल कुमार निगम	25
कश्मीर घाटी की अपराजिता शिक्षाविद्...	- डॉ. नीलम कुमारी	26
हमारी हिन्दी	-डॉ. उर्विजा शर्मा	28
हिन्दी दिवस विशेष : कैसे हुआ कविता का उद्भव	-डॉ.रविन्द्र शुक्ल	29
भारतीय संस्कृति के आदर्श पत्रकार देवर्षि नारद	- अनुराग सिंह	30
लोकमान्य तिलक द्वारा रोपा पौधा, ...	- नीलम भागी	31
नाट्यकलाओं के अधिष्ठात्रा देव नटराज और...	- डॉ. शैलेश श्रीवास्तव	32
मीडिया सुर्खियां	- प्रतीक खरे	34

पाठकगण पत्रिका के बारे में अपने सुझाव एवं प्रतिक्रिया,'संपादक के नाम पत्र' शीर्षक से ई-मेल (keshavsamvad@gmail.com) के माध्यम से भेज सकते हैं। चुने हुए पत्रों को पत्रिका के अगले अंक में प्रकाशित किया जायेगा।

ISSN No. 2581-3528

संपादकीय.....

भारत के राष्ट्रीय चिंतन के मूल को अगर देखें तो वह शिक्षा और संस्कार पर आधारित है। शिक्षा की महत्ता के संस्कारों का सम्मिश्रण कुछ ऐसा है कि गुरु का स्थान भगवान से ऊपर रखा गया है। गुरु शब्द में 'गु' का अर्थ है 'अंधकार' और 'रु' का अर्थ है 'प्रकाश'। गुरु के शाब्दिक अर्थ को अगर देखें तो 'अंधकार से प्रकाश की ओर ले जाने वाला मार्गदर्शक'। मनुस्मृति में गुरु को कुछ इस तरह से परिभाषित किया गया है...

निषेकादीनि कर्माणि यः करोति यथाविधि।
सम्भावयति चान्नेन स विप्रो गुरुरुच्यते।।

भारत के स्वाभाविक संदर्भ में बार-बार यह कहा जाता है कि भारत फिर से विश्व गुरु बनेगा, तो क्या माना जाए कि भारत कभी विश्व गुरु था। आज नहीं है और भविष्य में कभी फिर से विश्व गुरु बनेगा। पौराणिक काल से ही अगर उपनिषदों का अवलोकन करें तो भारतीय शिक्षा पद्धति पारंपरिक रूप से गुरुकुल की रही है। जहां बहुआयामी सिर्फ शास्त्र की ही नहीं बल्कि शस्त्र की भी शिक्षा दी जाती थी जो पूर्णतया विज्ञान आधारित होती थी। यह चहुंमुखी शोध करने को प्रेरित करती थी। भारत के आध्यात्मिक वैज्ञानिक शोध ने ज्योतिष से लेकर खगोल, अर्थशास्त्र से लेकर नाट्यशास्त्र और न्यायशास्त्र सभी क्षेत्रों में विश्व का मार्गदर्शन किया है। भारत में गुरु का स्थान सर्वोपरि माना जाता है। जब विश्व के अन्य देश शिक्षा जैसे शब्द से अनभिज्ञ थे, उस वक्त हमारा देश ज्ञान के सागर में गोते लगा रहा था। मनुस्मृति भारत का वह ऐसा ग्रंथ है जो विभिन्न क्षेत्रों को अपने अंदर समाहित करता है। कौटिल्य, आचार्य चाणक्य, राजनीतिशास्त्र से लेकर न्याय और अर्थशास्त्र में विश्व के मार्ग दर्शक माने जाते हैं वहीं आर्यभट्ट, वराहमिहिर और भास्कराचार्या ज्योतिष,गणित और खगोल विज्ञान के क्षेत्र में विश्व के मार्गदर्शक बने।

यह सर्वविदित है कि "शिक्षा दान महादान" होता है। यह पंक्ति मात्र एक वाक्य ही नहीं, यह हमारी शिक्षा और संस्कृति से जुड़ी प्राचीन काल से चली आ रही परंपरा है। विश्व गुरु कहलाने वाला हमारा भारत देश प्राचीन काल से ही शिक्षा और शिक्षण कार्य को पवित्र मानता रहा है।

तक्षशिला हो या विक्रमशीला, नालंदा या मिथिला, पुष्प गिरी विश्वविद्यालय हो या गार्जुनकोंडा विश्वविद्यालय, इनकी शिक्षण शैली और आर्किटेक्ट बताता है कि भारत की गुरुकुल परंपरा में भारत की धरोहर छिपी है और विश्व पटल पर हमें गौरवान्वित करने के लिए हमारे पूर्वज हमारे लिए एक भव्य विरासत छोड़ गए हैं।

संपादक

ISSN No. 2581-3528

प्रथम गुरु आदि गुरु आचार्य वेदव्यास

डॉ. सुनीता शर्मा

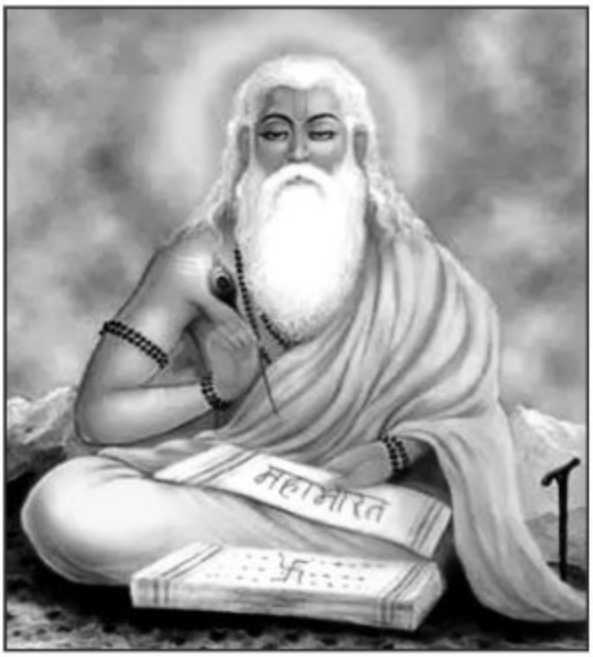

भारतीय गुरुकुल परंपरा बहुत ही प्राचीन है। रत्नगर्भा भारत की मिट्टी ने ऐसे महान सपूतों को जन्म दिया है जो आज 21वीं सदी में भी प्रासंगिक हैं। विश्व के विकसित देश जिन– जिन सिद्धांतों का आज प्रतिपादन कर रहे हैं उन्हें भारतीय संतों, ऋषियों, मुनियों और आचार्यों ने ईसा से 5000 वर्ष पूर्व भी सिद्ध कर दिया था। ऐसे ही एक महान संत और आचार्य वेदव्यास जी के विषय में आज हम जानेंगे।

महाभारत ग्रंथ के रचयिता, अट्ठारहपुराण, श्रीमद्भागवत और मानव जाति को अनगिनत रचनाओं का भंडार देने वाले 'वेद व्यास' को भगवान का रूप माना जाता है ।

धर्म–दर्शन नीति और साहित्य में योगदान देने वाले ऋषियों में वेदव्यास जी का नाम सर्वाधिक लोकप्रिय है। महर्षि वेदव्यास जी का रंग पीला था जिनके कारण उन्हें भगवान कृष्ण का अवतार माना जाता है उनका जन्म जमुना नदी के एक द्वीप पर हुआ था इसलिए उन्हें कृष्ण द्वैपायन के नाम से भी जाना जाता है। वेदव्यास जी, महर्षि पाराशर और सत्यवती के पुत्र थे। महर्षि पाराशर (पाराशर स्मृति) के रचनाकार थे। महर्षि वेदव्यास के चार पुत्र बहुत ही प्रसिद्ध हुए हैं जिनके नाम हैं पांडु, धृतराष्ट्र, विदुर और सुकदेव। वेदव्यास ने वासुदेव और सनकादिक जैसे महान संतों से ज्ञान प्राप्त किया और उनके जीवन में सबसे महत्वपूर्ण लक्ष्य नारायण परमात्मा को प्राप्त करना था। ये वेदव्यास के नाम से भी जाने जाते हैं क्योंकि उन्होंने वेदों के लिए विभिन्न ग्रंथ लिखे थे।

वेदव्यास जी के समय से पहले एक ही वेद था। इसके अध्ययन और कंठस्थ करने में होने वाली कठिनाइयों को दूर करने के लिए कृष्ण द्वैपायन ने उन्हें चार भागों में बांट दिया जिसके कारण उनका नाम वेदव्यास हो गया।

महर्षि वेदव्यास को समस्त मानव जाति का गुरु माना जाता है। भारतीय संस्कृति में गुरु को ब्रह्मा, विष्णु और महेश के समान पूज्य माना गया है।

वेदव्यास जी का सबसे बड़ा योगदान महाभारत और भगवद् गीता के रूप में है। भगवद् गीता महाभारत का एक भाग है। शंकराचार्य जी ने भगवद् गीता पर जब भाष्य लिखा तो इस ग्रंथ को अलग से पढ़ा जाने लगा। महाभारत विश्व का सबसे बड़ा महाकाव्य है और वेदव्यास जी स्वयं भी इसकी अनेक घटनाओं के समय में उपस्थित थे। महाभारत के बारे में कहा जाता है कि जो कुछ भी विश्व में है, वह इस ग्रंथ में है और जो इसमें नहीं वह कहीं नहीं है।

धर्मे चार्थे च कामे च मोक्षे च भरतर्षभ।
यदिहास्ति तदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत् क्वचित्

मानव के सर्वोच्च गुणों से लेकर सबसे बड़े दुर्गुणों तक का सटीक वर्णन महाभारत में है। साधारण मानव के कर्तव्य से लेकर राजनीति तक का समावेश इसमें है। महाभारत का प्रारंभिक नाम जय संहिता है इसमें कौरव पांडव के युद्ध के साथ–साथ उस समय के राज्यों, इतिहास, भूगोल और नीति इत्यादि का भी वर्णन है। श्रीमद् भगवद् गीता को उपनिषदों का सार माना जाता है और यह भारतीय अध्यात्म के प्रतिनिधि ग्रंथ के रूप में प्रतिष्ठित है। गीता मूलतः कर्मयोग को प्रतिपादित करता है लेकिन इसमें ज्ञान और भक्ति मार्ग का भी सम्यक वर्णन है। 700 श्लोकों का यह ग्रंथ गागर में सागर को समेटे हुए हैं और विश्व की लगभग सभी भाषाओं में इसका अनुवाद हो चुका है। सदियों से विद्वान इस पर भाष्य और टीका लिखते आए हैं। व्यास जी के पुत्र सुकदेव भी धर्म और अध्यात्म के प्रकांड विद्वान थे। पुत्र के अतिरिक्त वेदव्यास जी के पैल,जैमिनि, वैशम्पायन और सुमन्तु नामक चार शिष्य थे जिनमें से प्रत्येक को एक–एक वेद का प्रचार–प्रसार करने का उत्तर दायित्व दिया गया था।

ब्रह्मसूत्र या वेदांत दर्शन के रचनाकार भी वेदव्यास जी ही हैं तथा उन्हें ही बादरायण व्यास भी कहा जाता है। कहीं कहीं यह भी कहा जाता है कि 'व्यास' एक पदवी थी तथा बादरायण व्यास वेदव्यास से भिन्न थे। ब्रह्मसूत्र षड्दर्शनों में से एक तथा सर्वाधिक मान्य दर्शन माना जाता है। वेदव्यास जी के जन्म को गुरु पूर्णिमा और व्यास पूर्णिमा के रूप में मनाया जाता है। व्यास जी के देश भर में कई मंदिर भी हैं। **(लेखिका शिक्षाविद एवं लेखिका हैं)**

विश्व की पहली कविता का पहला पुरस्कार!

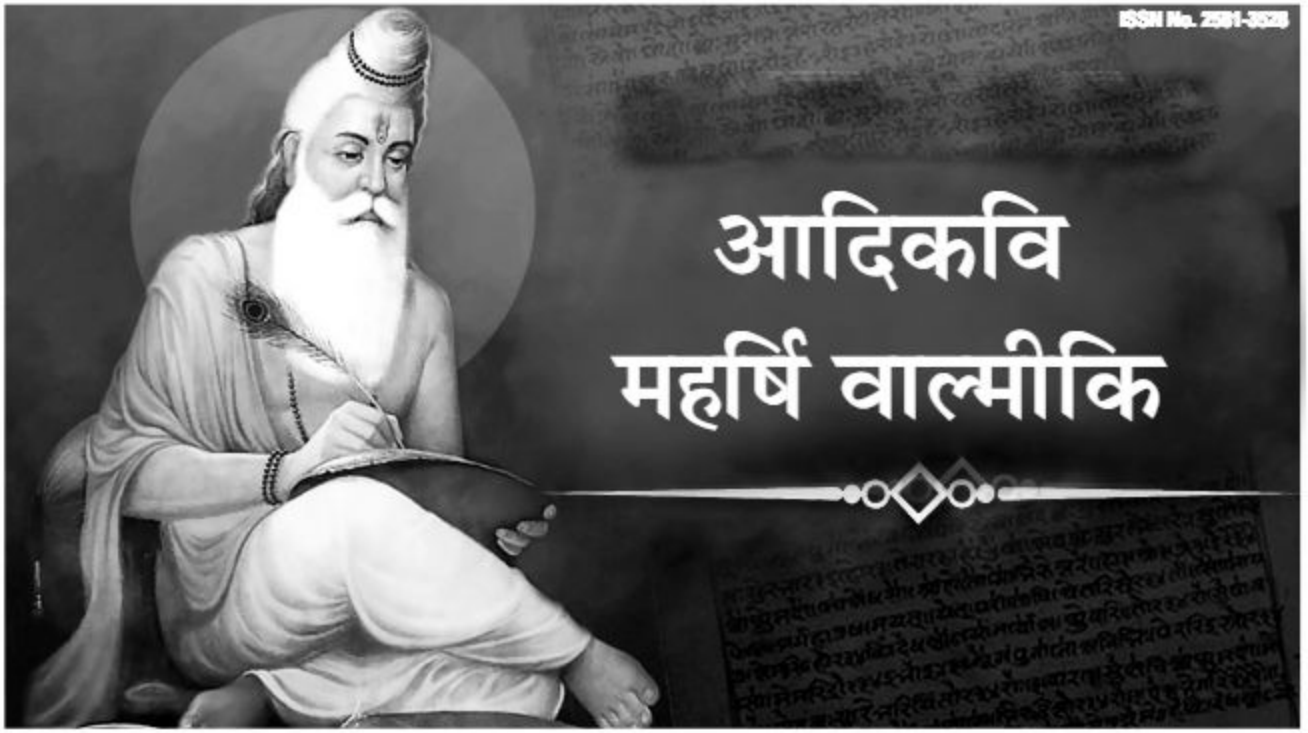

डॉ. बुद्धिनाथ मिश्र

महर्षि वाल्मीकि को आदिकवि कहा जाता है, क्योंकि उनसे पहले विश्व ने केवल वैदिक मंत्र सुने थे, जिन्हें अपौरुषेय कहा गया है। विद्वानों के समाज में आदिकवि के महाकाव्य को 'आर्ष रामायण' मानते हुए उसे सार्वकालिक काव्यबीज कहा गया–काव्यबीजं सनातनम्। यानी विश्व की सारी कविताओं का उत्स यही है। रामायण का शाब्दिक अर्थ है राम का मार्ग (अयन), जिसके जीवनादर्शों पर अनंत काल तक मानव सभ्यता चल सके और जिसके निकष पर किसी देशकाल की सभ्यता– संस्कृति को आँका जा सके। महाभारत, भागवत और 18 पुराणों के रचयिता महर्षि व्यास ने 'स्कंद पुराण' में महर्षि वाल्मीकि की जीवनी बहुत श्रद्धापूर्वक लिखी है। पुराणों में यह भी चर्चा है कि यदुवंशी लोग रामायण पर आधारित नाटक खेलते थे– रामायणं महाकाव्यमुद्दिश्य नाटकं कृतम्। बाद में गोस्वामी तुलसीदास जी ने अपने 'रामचरित मानस' को लोकजीवन में उतारने के लिए काशी में रामलीला का सूत्रपात किया।

वैसे तो लोकजीवन में देवर्षि नारद को हास्य का पात्र बना दिया गया है, जिसका असर पौराणिक फिल्मों पर भी पड़ा है, लेकिन वाल्मीकीय रामायण का शुभारंभ नारद के गुणगान से होता है और उसका पहला शब्द 'तप' है–

तपःस्वाध्याय-निरतं तपस्वी वाग्विदांवरम्।

नारदं परिपप्रच्छ वाल्मीकिर्मुनिपुंगवम्॥

महर्षि वाल्मीकि तप और स्वाध्याय में निरत, कुशल वक्ता, मुनिपुंगव नारद से पूछते हैं कि इस समय संसार में सबसे बड़े गुणवान, वीर्यवान, धर्मज्ञ, कृतज्ञ, सत्यवादी और दृढ़व्रती कौन हैं? इस पर, तीनों लोकों के ज्ञाता नारद जी इक्ष्वाकु वंश में उत्पन्न दाशरथि राम के गुणों का वर्णन करते हुए राम का चरित वहाँ से शुरू करते हैं, जहाँ राजा दशरथ अपने प्रजा–वत्सल ज्येष्ठ पुत्र राम को युवराज पद पर अभिषिक्त करना चाहते हैं और उस तैयारी को देखकर रानी कैकेयी पूर्व में दिये गये वरों का संदर्भ देते हुए राजा दशरथ से राम का वनवास और भरत का राज्याभिषेक माँगती हैं–विवासनं च रामस्य भरतस्याभिषेचनम्। राम का चरित्र यहीं से उभरता है, जब वे युवराज की पात्रता रखते हुए भी कैकेयी का प्रिय करने के लिए, पिता के निर्देश का पालन करते हुए वन चले जाते हैं। उसके बाद होने वाली सारी रामकथा संक्षेप में त्रिकालदर्शी नारद महर्षि वाल्मीकि को सुनाते हैं। अंत में वे रामराज्य का वर्णन करते हुए भविष्य की रूपरेखा भी खींचते हैं कि 11 हजार वर्षों तक राज्य करने के बाद श्रीराम ब्रह्मलोक चले जाएंगे (ब्रह्मलोकं प्रयास्यति)।

अभी तक वाल्मीकि केवल तपस्वी थे। देवर्षि के मुंह से सीता और राम की अलौकिक कथा सुनकर उनके भीतर करुणा की धारा बह निकली। महामुनि नारद के प्रस्थान करने के बाद वाल्मीकि अपने शिष्य भारद्वाज से वल्कल लेकर तमसा नदी के तट की ओर स्नान करने गये। वे विशाल वन में विचर ही रहे थे कि एक मर्मान्तक घटना घटी। वहाँ क्रौंच पक्षी का एक जोड़ा प्रेमक्रीड़ा कर रहा था कि एक निष्ठुर व्याध ने वाण चलाकर नर क्रौंच को मार डाला। रक्त से लथपथ उस पक्षी के भूमि पर गिरते ही क्रौंची चीत्कार कर

ISSN No. 2581-3528

उठी। इस कारुणिक दृश्य से विकल होकर धर्मात्मा वाल्मीकि के मुँह से निषाद को संबोधित यह अनुष्टुप श्लोक निकल पड़ा–

मा निषाद प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वतीः समाः।

यत्क्रौंचमिथुनादेकमवधीः काममोहितम्॥

(निषाद, तुझे कभी स्थायी शांति न मिले, क्योंकि तूने इस निरपराध क्रौंच जोड़े में से एक काममोहित को मार डाला।)

कहने को तो महर्षि कह गये, मगर बाद में उन्हें लगा कि यह तो चार चरणों में आबद्ध, बराबर अक्षरों वाला श्लोक है, जिसे वीणा पर गाया जा सकता है। स्नान कर मुनि शिष्य भरद्वाज के साथ आश्रम लौटे, संध्या वंदन के लिए आसन पर बैठ भी गये, मगर उनके मन में वह श्लोक अटका रहा। तभी अखिल सृष्टि की रचना करने वाले, चतुर्मुख ब्रह्मा महर्षि वाल्मीकि से मिलने उनके आश्रम आये। परम विस्मित होकर महर्षि ने ब्रह्मा जी का स्वागत–सत्कार किया। जब दोनों उपयुक्त आसन पर बैठ गये, तब महर्षि ने क्रौंच–वध और उसके बाद उनके मुख से शाप रूप में निकले श्लोक की चर्चा की। तब ब्रह्मा जी ने हँसकर कहा कि मेरी प्रेरणा से ही आपकी जिह्वा पर सरस्वती श्लोक रूप में अवतरित हुई है। अभी नारद जी ने जो धीर और धर्मात्मा श्रीराम के जीवन का वर्णन आपसे किया है, उसे काव्य में अभिव्यक्त करिये। ब्रह्मा जी ने श्रीराम, सीता, लक्षण और राक्षसों के सम्पूर्ण गुप्त या प्रकट वृत्तांत को जानने की दिव्य शक्ति उन्हें दी और कहा कि इस काव्य में कोई भी बात झूठी नहीं होगी–न ते वागनृता काव्ये काचिदत्र भविष्यति। ब्रह्माजी ने वरदान दिया कि पृथ्वी पर जब तक नदी–पर्वत रहेंगे, तबतक रामायण की कथा लोक–जीवन में प्रवाहित रहेगी–

यावत्स्थास्यंति गिरयः सरितश्च महीतले।

तावद् रामायणकथा लोकेषु प्रचरिष्यति॥

साथ ही, जबतक राम की कथा रहेगी, तब तक आपकी प्रतिष्ठा तीनों लोकों में रहेगी। यह कहकर ब्रह्मा जी समस्त आश्रमवासियों को विस्मय में डालकर अंतर्धान हो गये।

ब्रह्मचारी गण उसी एक श्लोक को बारंबार वीणा पर गाने लगे। तब महर्षि वाल्मीकि ने ऐसे ही श्लोकों में पूरा रामायण रचने का संकल्प किया। उस समय तक लिपि का विधिवत विकास नहीं हुआ था, इसलिए सारा काव्य–संभार वेदों की भाँति वाचिक यानी मौखिक ही था। इसलिए महर्षि ने कुशासन पर बैठकर, समाधि लगाकर पूरे वृत्तांत का साक्षात्कार किया। उन्होंने राम–लक्ष्मण–सीता, रानियों सहित राजा दशरथ के हँसने–बोलने आदि सभी चेष्टाओं और सम्पूर्ण राष्ट्र की गतिविधियों का अपने योगधर्म से यथावत साक्षात्कार किया। यहाँ तक कि योग बल से उन्होंने भूत–वर्तमान–भविष्य का सूक्ष्म निरीक्षण किया। उसके बाद उन्होंने राम के जन्म से लेकर वनवास, सेतुबंध, रावण आदि राक्षसों का वध, राम का अयोध्या लौटना, राज्याभिषेक, राजधर्म के कारण वैदेही का वन में त्याग, लव–कुश का जन्म आदि समस्त

रामायण का शाब्दिक अर्थ है राम का मार्ग (अयन), जिसके जीवनादर्शों पर अनंत काल तक मानव सभ्यता चल सके और जिसके निकष पर किसी देशकाल की सभ्यता- संस्कृति को आँका जा सके। महाभारत, भागवत और 18 पुराणों के रचयिता महर्षि व्यास ने 'स्कंद पुराण' में महर्षि वाल्मीकि की जीवनी बहुत श्रद्धापूर्वक लिखी है। पुराणों में यह भी चर्चा है कि यदुवंशी लोग रामायण पर आधारित नाटक खेलते थे- रामायणं महाकाव्यमुद्दिश्य नाटकं कृतम्। बाद में गोस्वामी तुलसीदास जी ने अपने 'रामचरित मानस' को लोकजीवन में उतारने के लिए काशी में रामलीला का सूत्रपात किया।

घटनाओं का विस्तृत वर्णन रामायण में किया। महर्षि ने छह काण्डों, 5 सौ सर्गों और 24 हजार श्लोकों में पूरे रामायण की रचना की–

चतुर्विंशत्सहस्राणि श्लोकानामुक्तवान् ऋषिः।

तथा सर्गशतान् पञ्च षट्काण्डानि तथोत्तरम्॥

'रामायण' या 'पौलस्त्य वध' महाकाव्य तो रच गया। अब महर्षि को चिंता हुई कि इतने विशाल महाकाव्य को आत्मसात् कर कौन व्यक्ति जन समुदाय को सुनाएगा? तभी आश्रम में रहने वाले वटु–द्वय कुश और लव महर्षि के पास आए। अत्यंत सुरूपवान दोनो भाई राम के प्रतिरूप लगते थे। उनकी धारणा शक्ति अद्भुत थी, मधुर स्वर भी था और दोनों वेदों में पारंगत हो चुके थे। महर्षि दोनों भाइयों को सुयोग्य मानकर वीणा पर स्वर–ताल से रामायण का गायन सिखाने लगे। यथा समय दोनों भाइयों ने सम्पूर्ण महाकाव्य को कण्ठस्थ कर लिया और जब कभी ऋषियों, ब्राह्मणों और साधुओं का समागम होता था, तब उनके बीच बैठकर दोनों भाई एकाग्रचित्त होकर रामायण का गान करने लगे।

एक बार ऐसे ही शुद्ध अंतःकरण वाले वनवासी ऋषि–मुनियों की सभा हुई, जिसमें महात्माओं के बीच बैठकर जब कुश–लव ने रामायण के श्लोकों को गाना शुरू किया, तो उसे सुनकर महात्माओं की आँखें भर आयीं। सभी साधु–साधु (वाह–वाह) कर उठे और कुमारों के मधुर गायन और श्लोकों के माधुर्य की भूरि–भूरि प्रशंसा करने लगे–अहो गीतस्य माधुर्यं श्लोकानाञ्च विशेषतः। वे सोचने लगे कि यद्यपि यह घटना बहुत पहले ही हो चुकी है (चिरनिर्वृत्तमप्येतत्), तथापि प्रस्तुति इतनी सजीव थी कि लगा, पूरी घटना आँखों के सामने हो रही हो। प्रसन्न होकर किसी मुनि ने दोनों कुमारों को कलश प्रदान किया, किसी ने वल्कल। किसी ने काला मृगचर्म भेंट किया, किसी ने जनेऊ (यज्ञसूत्र)। एक ऋषि ने कमण्डलु दिया तो दूसरे ने मूँज की मेखला। तीसरे ने आसन तो चौथे ने कौपीन (लँगोटी) प्रदान किया। एक मुनि ने हर्षित होकर कुठार दिया। किसी ने काषाय (गेरुआ वस्त्र) तो किसी ने चीर (वस्त्रखंड) दिया। किसी मुनि ने खुश होकर जटा बाँधने की रस्सी (जटाबन्धन), किसी ने समिधा बाँधनेवाली डोरी (काष्ठरज्जु), किसी ने यज्ञभाण्ड (यज्ञ का बरतन), किसी ने काष्ठभार(तिनके से निर्मित जूना) तो किसी ने गूलर की लकड़ी से बना पीढ़ा अर्पित किया। किसी ने दोनों कुमारों के दीर्घायु होने का आशीष दिया और किसी ने दोनों के कल्याण की कामना की। सभी सत्यवादी मुनियों ने दोनों कुमारों को नाना प्रकार के वरदान दिये और महर्षि वाल्मीकि के अद्भुत काव्य को सराहते हुए उसे परवर्ती कवियों के लिए श्रेष्ठ आधार माना।

इस प्रकार, विश्व की पहली बड़ी कविता के रचयिता को मनीषियों की मुक्तकंठ प्रशंसा मिली और उसका गान करने वाले दोनों कुमारों को जीवन का पहला सात्विक पुरस्कार।

(लेखक साहित्यकार, लेखक एवं कवि हैं)

ISSN No. 2581-3528

महान भारतीय गणितज्ञ भास्कराचार्य द्वितीय

पंकज जगन्नाथ जयस्वाल

भारत की महान विरासत, वैज्ञानिक और तकनीकी ज्ञान, अवधारणाओं और कौशल को न केवल राजनीतिक रूप से प्रभावित पश्चिमी लोगों द्वारा, बल्कि कई स्वार्थी भारतीयों द्वारा भी अनदेखा किया गया है, जो सनातन धर्म सिद्धांतों, सभी विषयों में ज्ञान और सार्वभौमिक अच्छे सिद्धांतों का तिरस्कार करते हैं।

कई पश्चिमी वैज्ञानिकों और विद्वानों ने विज्ञान, गणित, अंतरिक्ष, इंजीनियरिंग और चिकित्सा की बेहतर समझ हासिल करने के लिए महान भारतीय दार्शनिकों, ऋषियों, वेदों, उपनिषदों और भगवद् गीता का अध्ययन किया है। हालाँकि, महान विरासत को निम्न गरिमा और शर्म के ज्ञान के अलावा और कुछ नहीं देखने के लिए भारतीयों का ब्रेनवॉश किया गया है। हमने, भारतीय के रूप में, एक उच्च सामाजिक और आर्थिक कीमत चुकाई और एक गुलाम मानसिकता विकसित की।

जर्मन भौतिक विज्ञानी वर्नर हाइजेनबर्ग ने एक बार कहा था, 'भारतीय ज्ञान के बारे में जानने के बाद, क्वांटम भौतिकी के कुछ विचार जो इतने पागल लग रहे थे, अचानक बहुत गहराई से समझ में आये'।

जर्मन दार्शनिक गॉटफ्राइड वॉन हेरडर ने एक बार कहा था, 'मानव जाति की उत्पत्ति भारत में देखी जा सकती है जहां मानव मन को ज्ञान और गुण के पहले आकार मिले।'

जर्मन दार्शनिक, शोपेनहावर ने अपने स्मारकीय 'द वर्ल्ड एज विल एंड रिप्रेजेंटेशन' में लिखा है – 'पूरी दुनिया में, उपनिषदों के रूप में इतना फायदेमंद और इतना ऊंचा कोई अध्ययन नहीं है। यह मेरे जीवन का सुखद पल रहा है; यह मेरी मृत्यु का सांत्वन भी होगा।" उपनिषदों का ज्ञान उन सभी के लिए गहना है जो न केवल भारतीय उपमहाद्वीप की सार्वभौमिक मेहमान नवाज संस्कृति की सराहना करते हैं, बल्कि वे भी जो विश्व–दृष्टि और ब्रह्मांडीय अस्तित्व के शुद्ध ज्ञान को जानना चाहते हैं।

ऐसे ही एक महान गणितज्ञ थे भास्कराचार्य द्वितीय : भास्कर द्वितीय (सी 1114–1185), जिन्हें भास्कराचार्य ("भास्कर, शिक्षक") के रूप में भी जाना जाता है और भास्कर प्रथम के नाम के साथ भ्रम से बचने के लिए भास्कर द्वितीय के रूप में, भारत के एक महान गणितज्ञ और खगोलशास्त्री थे। उनके मुख्य कार्य सिद्धांत शिरोमणि के छंदों के अनुसार, उनका जन्म 1114 में वर्तमान महाराष्ट्र के पश्चिमी घाट क्षेत्र में पाटन शहर के पास सह्याद्री पर्वत श्रृंखला में विज्जलविड में हुआ था।

कोलब्रुक पहले यूरोपीय थे जिन्होंने भास्कराचार्य द्वितीय के गणितीय क्लासिक्स का अंग्रेजी में अनुवाद किया 1817 में। भास्कर द्वितीय उज्जैन में एक ब्रह्मांडीय वेधशाला का नेतृत्व करते थे, जो प्राचीन भारत का मुख्य गणितीय केंद्र था। भास्कर और उनके कार्यों ने 12वीं शताब्दी के गणितीय और खगोलीय ज्ञान में महत्वपूर्ण योगदान दिया। उन्हें मध्यकालीन भारत का महानतम गणितज्ञ बताया गया है। उनका मुख्य कार्य, सिद्धांत–शिरोमणि, जिसे लीलावती, बीजगणित, ग्रहगणिता और गोलाध्याय के रूप में जाने जाने वाले चार भागों में विभाजित है, जिन्हें कभी–कभी चार स्वतंत्र कार्य माना जाता है। ये चार खंड अंकगणित, बीजगणित, ग्रह और गोल उस क्रम में दिखाई देते है। उन्होंने 'करण कौतुहल'नामक एक ग्रंथ भी लिखा। उनका जन्म 1036 में शक युग (1114 सीई) में हुआ था और जब वे 36 वर्ष के थे तब उन्होंने सिद्धांत–शिरोमणि की रचना की थी। जब वे 69 वर्ष के थे, तब उन्होंने करण–कौतुहल (1183 में) नामक एक अन्य रचना भी लिखी। उनकी रचनाएँ ब्रह्मगुप्त, श्रीधर, महावीर, पद्मनाभ और अन्य पूर्वजों के प्रभाव को दर्शाती हैं।

लीलावती : पहले खंड, लीलावती (जिसे पाटीगणिता या अंकगणिता के नाम से भी जाना जाता है) का नाम उनकी बेटी के नाम पर रखा गया है और इसमें 277 श्लोक हैं। गणना, प्रगति, माप, क्रमपरिवर्तन, और अन्य विषय शामिल हैं।

बीजगणित : बीजगणित के दूसरे खंड में 213 श्लोक हैं। इसमें शून्य, अनंत, धनात्मक और ऋणात्मक संख्याएँ और अनिश्चित समीकरण जैसे (अब प्रसिद्ध) पेल्ले का समीकरण शामिल है, जिसे कुट्टक पद्धति का उपयोग करके हल किया जाता है।

ग्रहगणिता : ग्रहगणिता के तीसरे खंड में ग्रहों की गति की चर्चा करते हुए, उन्होंने उनकी तात्कालिक गति पर विचार किया। वह एक सन्निकटन पर पहुँचा। इसमें 451 श्लोक हैं।

गणित : भास्कर के गणितीय योगदानों में निम्नलिखित हैं–

एक पायथागोरस प्रमेय प्रमाण एक ही क्षेत्र की दो बार गणना करके और फिर a2 + b2 = c2 प्राप्त करने के लिए शर्तों को रद्द कर देता है।

लीलावती द्विघात, घन और चतुर्थक अनिश्चित समीकरणों के समाधान बताती हैं।

अनिश्चित द्विघात समीकरणों (कुट्टक) के पूर्णांक समाधान। वह जो नियम देता है (असल में) वही हैं जो 17वीं शताब्दी के पुनर्जागरण यूरोपीय गणितज्ञों द्वारा दिए गए थे।

ax2 + bx + c = y के रूप के अनिश्चित समीकरणों के लिए, चक्रीय चक्रवाल विधि का उपयोग किया जाता है। इस समीकरण का समाधान परंपरागत रूप से 1657 में विलियम ब्रोंकर द्वारा दिया गया था, हालांकि उनकी विधि चक्रवाल पद्धति से अधिक कठिन थी।

भास्कर द्वितीय ने x2 ny2 = 1 (तथाकथित 'पेल्स समीकरण') को हल करने के लिए पहली सामान्य विधि प्रस्तुत की।

दूसरे क्रम के डायोफैंटाइन समीकरण समाधान, जैसे 61x2 + 1 = y2 फ्रांसीसी गणितज्ञ पियरे डी फर्मेट ने 1657 में इस समीकरण को एक समस्या के रूप में पेश किया था, लेकिन इसका समाधान यूरोप में 18वीं शताब्दी में यूलर के समय तक अज्ञात था। कई अज्ञात के साथ द्विघात समीकरणों को हल किया और नकारात्मक और अपरिमेय समाधानों की खोज की प्रारंभिक गणितीय विश्लेषण अवधारणा।

अन्तर्निहित कलन की प्रारंभिक अवधारणा, साथ ही अभिन्न कलन की दिशा में उल्लेखनीय योगदान।

खगोल : 7 वीं शताब्दी में ब्रह्मगुप्त द्वारा विकसित एक खगोलीय मॉडल का उपयोग करते हुए, भास्कर ने कई खगोलीय मात्राओं को सटीक रूप से परिभाषित किया, जैसे कि नक्षत्र वर्ष की लंबाई, पृथ्वी को सूर्य की परिक्रमा करने के लिए आवश्यक समय, 365.2588 दिन, सूर्यसिद्धांत के समान। आधुनिक स्वीकृत माप 365.25636 दिन है, जो 3.5 मिनट छोटा है।

यह इन महान लोगों के ज्ञान का अध्ययन और सम्मान करने का समय है, जिसके लिए गहन अंतर्दृष्टि प्राप्त करने के लिए अतिरिक्त शोध की आवश्यकता है जिससे सभी को लाभ होगा।

(लेखक ब्लॉगर एवं शिक्षाविद हैं)

ISSN No. 2581-3528

भारत के महान खगोलशास्त्री वराहमिहिर

ज्योति सिंह

विश्व जब शिक्षा की शैशवावस्था में था, और लड़खड़ा कर नन्हे बालक की तरह चलने की कोशिश कर रहा था तब भारत के विश्वविद्यालय और यहाँ की शिक्षा व्यवस्था अपने चरम पर थी। 8वीं शताब्दी से 12वीं शताब्दी के बीच भारत पूरे विश्व में शिक्षा का सबसे बड़ा और प्रसिद्ध केंद्र बना रहा। गणित, ज्योतिष, भूगोल, चिकित्सा विज्ञान, भाषा विज्ञान, व्याकरण, दर्शनशास्त्र, आयुर्वेद–चिकित्सा, शल्य–चिकित्सा, कृषि, भूविज्ञान, खगोल–शास्त्र, ज्ञान–विज्ञान, समाज–शास्त्र, धर्म, मनोविज्ञान के साथ ही अन्य विषयों की शिक्षा देने में भारतीय विश्वविद्यालयों के समकक्ष पूरे विश्व में कोई था ही नहीं। हालाँकि आजकल अधिकतर लोग सिर्फ दो ही प्राचीन विश्वविद्यालयों के बारे में जानते हैं पहला नालंदा और दूसरी तक्षशिला, लेकिन इनके अलावा भी 15 से ऊपर ऐसे विश्वविद्यालय थे जो उस समय शिक्षा के मंदिर थे। जिनमें विभिन्न विषयों पर बड़े–बड़े अनुसंधान हुए। इनमें से एक मुख्य विषय है खगोल शास्त्र।

क्या आप जानते हैं कि खगोल शास्त्र क्या है ? यह एक ऐसा शास्त्र है जिसमें पृथ्वी और उसके वायुमण्डल के बाहर होने वाली घटनाओं का अवलोकन, विश्लेषण और व्याख्या की जाती है। खगोलिकी, सभी प्राकृतिक विज्ञानों में सबसे प्राचीन है। इसका आरम्भ प्रागैतिहासिक काल से हो चुका था। प्राचीन धार्मिक और मिथकीय कार्यों में इसके दर्शन होते हैं।

भारत में खगोलिकी की परम्परा अति प्राचीन और उज्ज्वल रही है। वास्तव में भारत में खगोलीय अध्ययन वेद के अंग के रूप में 1500 ईसा पूर्व या उससे भी पहले शुरू हुआ। वेदांग ज्योतिष इसका सबसे पुराना ग्रन्थ है।

हमारी सनातन संस्कृति यूँ ही महान नहीं कही जाती। हमारे महान ऋषियों मुनियों और गुरुओं ने भारत को शिक्षा गुरु बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी जिनमें से एक थे शून्य के संधानकर्ता, महान खगोलशास्त्री आचार्य वराहमिहिर। जो महाकवि कालीदास के समकालीन माने जाते हैं। माना जाता है कि इनकी प्रेरणा से तथा सम्राट विक्रमादित्य की सहायता से खगोल विद्या का अध्ययन करने के लिए आचार्य वराहमिहिर ने तत्कालीन हस्तिनापुर में एक नक्षत्र स्तंभ की स्थापना की थी जो कि तत्कालीन स्थापत्य कला का अनुपम एवं उत्कृष्ट उदाहरण है। आचार्य इस स्तंभ के ऊपर खड़े होकर नक्षत्रों की गति, अवस्था एवं उसके भविष्य में पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन किया करते थे।

आचार्य वराहमिहिर का जन्म–ई. सन् 499 तथा मृत्यु ई.सन 587 मानी जाती है। ये उज्जैन के समीप 'कपिथा गाँव' में एक ब्राह्मण परिवार में जन्मे। इनके पिता आदित्यदास सूर्य के उपासक थे। उन्होंने मिहिर को भविष्य शास्त्र पढ़ाया।

मिहिर ने राजा विक्रमादित्य के पुत्र की मृत्यु 18 वर्ष की आयु में होगी, यह भविष्यवाणी की थी। हर प्रकार की सावधानी रखने के बाद भी मिहिर द्वारा बताये गये दिन को ही राजकुमार की मृत्यु हो गयी।

राजा ने मिहिर को बुला कर कहा, 'मैं हारा, आप जीते'। मिहिर ने नम्रता से उत्तर दिया, 'महाराज, वास्तव में तो मैं नहीं 'खगोल शास्त्र' के 'भविष्य शास्त्र' का विज्ञान जीता है'।

महाराज ने मिहिर को मगध देश का सर्वोच्च सम्मान "वराह" प्रदान किया और उसी दिन से मिहिर "वराह मिहिर" के नाम से प्रसिद्ध हो गए। ये गुप्त काल के प्रसिद्ध खगोल शास्त्री माने जाते हैं।

भविष्य शास्त्र और खगोल विद्या में उनके द्वारा किए गये योगदान के कारण राजा विक्रमादित्य ने वराह मिहिर को अपने दरबार के नौ रत्नों में स्थान दिया।

वाराहमिहिर ने ही अपने पंचसिद्धान्तिका में सबसे पहले बताया कि अयनांश का मान 50.32 सेकंड के बराबर है। विज्ञान के इतिहास में वह पहले व्यक्ति थे जिन्होंने बताया कि सभी वस्तुओं का पृथ्वी की ओर आकर्षित होना किसी अज्ञात बल के कारण है। सदियों बाद 'न्यूटन' ने इस अज्ञात बल को 'गुरुत्वाकर्षण बल' नाम दिया।

वराह मिहिर का प्रथम पूर्ण ग्रंथ 'सूर्य सिद्धांत' था जो इस समय उपलब्ध नहीं है। उन्होंने चार प्रकार के माह गिनाये हैं – सौर, चन्द्र, वर्षीय और पाक्षिक। भविष्य विज्ञान इस ग्रंथ का दूसरा भाग है। उनके कथनानुसार ज्योतिष शास्त्र 'मंत्र', 'होरा' और 'शाखा' इन तीन भागों में विभक्त था।

होरा शास्त्र, लघु जातक, ब्रह्मस्फुट सिद्धांत, करण, सूर्य सिद्धांत, आदि ग्रंथ वराह मिहिर ने लिखे थे, ऐसा उल्लेख देखने को मिलता है।

उज्जैन में उनके द्वारा विकसित गणितीय विज्ञान का गुरुकुल सात सौ वर्षों तक अद्वितीय रहा। समय मापक घट यन्त्र, इन्द्रप्रस्थ में लौहस्तम्भ के निर्माण और ईरान के शहंशाह नौशेरवाँ के आमन्त्रण पर जुन्दीशापुर नामक स्थान पर वेधशाला की स्थापना – उनके कार्यों की एक झलक देते हैं।

वराह मिहिर का मुख्य उद्देश्य गणित और विज्ञान को जनहित से जोड़ना था। वस्तुतः ऋग्वेद काल से ही भारत की यह परम्परा रही है। वराहमिहिर ने पूर्णतः इसका परिपालन किया है।

वराहमिहिर वेदों के ज्ञाता थे मगर वह अलौकिक में आंखे बंद करके विश्वास नहीं करते थे। उनकी भावना और मनोवृत्ति एक वैज्ञानिक की थी।

(लेखिका, पूर्व कार्यक्रम निर्मात्री एवं संपादक दूरदर्शन तथा राष्ट्र सेविका समिति दिल्ली प्रान्त की सह प्रचार प्रमुख हैं)

ISSN No. 2581-3528

प्रथम योग गुरु

सिद्धार्थ शंकर गौतम

मैं इस प्रश्न पर सोच में पड़ जाता हूँ कि प्रथम योग गुरू किसे मानूं? क्योंकि योग विद्या के अनुसार 15 हजार साल पूर्व शिव ने योग सिद्धि प्राप्त की थी। यौगिक संस्कृति में शिव को ईश्वर के तौर पर नहीं पूजा जाता। इस संस्कृति में शिव को आदि योगी माना जाता है। यह शिव ही थे जिन्होंने मानव मन में योग का बीज बोया। इसमें कोई संदेह नहीं कि योग विद्या को शिव ने ही साकार किया किन्तु भारत में इसे जन–जन तक पहुंचाने का कार्य किया ब्रह्मऋषि अंगीरा के पुत्र महर्षि पतंजलि ने जिन्हें शेषनाग का अवतार माना जाता है। ऐसी भी मान्यता है कि पतंजलि व्याकरणाचार्य पाणिनि के शिष्य थे और उन्होंने पाणिनि के अष्टाध्यायी पर टीका लिखी थी जिसे महाभाष्य कहा जाता है। हालांकि इस विषय पर विद्वानों के मध्य विभेद है। पतंजलि के योग सूत्र का महत्त्व इसलिए भी है क्योंकि उन्होंने ही सर्वप्रथम योग को व्यवस्थित रूप देकर इसका प्रसार किया। पतंजलि के अष्टांग योग में धर्म, दर्शन तथा विज्ञान सम्मत सूत्र का समावेश है। हालांकि योग के जनक होने के बाद भी पतंजलि पर प्रामाणिक जानकारियों का अभाव है। कुछ लोगों का मत है कि पतंजलि का जन्म गोनिया में हुआ था और कालांतर में वे काशी में नागकूप में बस गए थे वहीं कुछ लोगों के अनुसार उनका जन्म गोंडा में हुआ था। कुछ लोग उनका जन्मस्थान मध्यप्रदेश के भोपाल के पास हुआ था। जनश्रुतियों के अनुसार उनका प्रादुर्भाव संभवतः पुष्यमित्र शुंग (195–142 ई.पू.) के शासनकाल में था।

ऐसा भी माना जाता है कि पतंजलि एक महान चिकित्सक भी थे और इन्होंने 'चरक संहिता' की रचना की थी। इसी कारण राजा भोज ने पतंजलि को तन से साथ मन का चिकित्सक कहा था। यही नहीं, पतंजलि योग सूत्र में महर्षि पतंजलि ने विभिन्न ध्यान अभ्यासों को सुव्यवस्थित कर उन्हें सूत्रों में संहिताबद्ध किया है। यह सूत्र योग के आठ अंगों को दर्शाते हैं। इसमें कुल 195 सूत्र हैं जिन्हें 4 पदों में विभाजित किया गया है।

समाधी पद में 51 सूत्र हैं और इसके अनुसार मन की वृतियों का निरोध ही योग है।

साधना पद में 55 सूत्र हैं जिनमें 'क्रिया योग' क्या है और उसके अंगों का वर्णन क्या है, शामिल है।

विभूति पद में भी 55 सूत्र हैं। इस अध्याय में संयम का वर्णन है जिसमें ध्यान, धारणा और समाधि शामिल हैं।

केवल्य पद में 34 सूत्र हैं तथा परम मुक्ति पर आधारित यह सबसे छोटा अध्याय है।

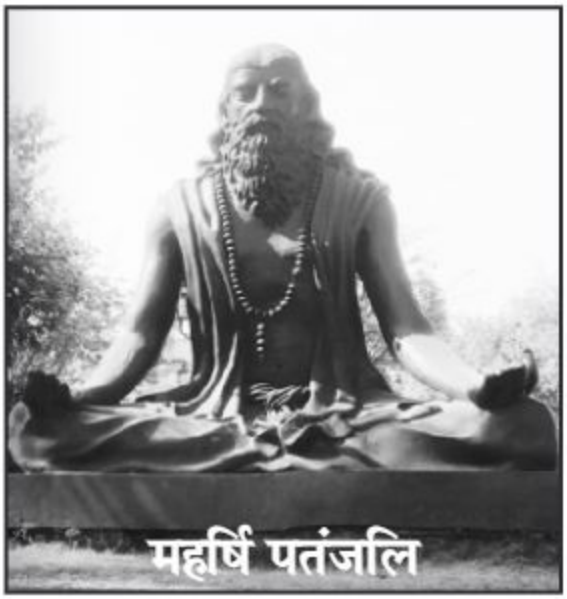

महर्षि पतंजलि

पतंजलि ने योग को धर्म और अंधविश्वास से बाहर निकाला और एक जगह जमा किया ताकि जानकारों की मदद से यह विद्या आम लोगों तक पहुंच सके। उन्होंने योग को ध्यान के साथ भी जोड़ा ताकि शरीर के साथ मानसिक स्वास्थ्य भी बढ़े। योग में अनुशासन का बड़ा महत्व है। पतंजलि का योग सूत्र कहता है– 'तदा दृष्टुः स्वरूपेऽवस्थानम्' अर्थात् यह आपको अपने आप में स्थापित करता है। योग के अनुशासन का उद्देश्य है विचलित मन को उसकी प्रवृत्तियों से स्वतंत्र कर आनंद की अनुभूति कराना। 'अथः योगानुशासनम्' अर्थात् अनुशासन आप को जोड़ता है तथा आपके बिखरे हुए अस्तित्त्व को स्वयं में पुनर्स्थापित करता है। पतंजलि ने योग को अनुशासन से जोड़कर 'स्व' को जानने का मार्ग बनाया। योग के माध्यम से मोक्ष प्राप्ति का सूत्र तो युगों पुराना है ही।

योग शब्द यूज धातु से बना है जिसका अर्थ है मेल। योग द्वारा व्यक्ति अपनी अंतःवृतियों को साधकर परमात्मा को प्राप्त कर सकता है। पतंजलि के अनुसार चित्तवृतियों के निरोध को ही योग कहा गया है। पतंजलि ने ही दुनिया को यह ज्ञान भी दिया कि योग द्वारा भगवत प्राप्ति संभव है और इसके लिए उन्होंने आठ चरण यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, ध्यान, धारणा और समाधि के बारे में शिक्षा दी।

पतंजलि के योग की महत्ता को आज पूरा विश्व मान्यता दे रहा है। आज कई स्कूल–कॉलेजों के पाठ्यक्रम में योग को सम्मिलित कर योग की शिक्षा दी जा रही है। कई संस्थानों में नित्य योग की कक्षा अनिवार्य कर दी गई है। विश्व के कई धर्मों ने योग के महत्व को स्वीकार किया है। वैज्ञानिक अध्ययनों से भी यह सिद्ध हुआ है कि योग द्वारा शारीरिक और मानसिक व्याधि से छुटकारा पाया जा सकता है। वहीं विशेषज्ञों ने इस तथ्य को भी स्वीकार किया है कि योग द्वारा असाधारण मानसिक शक्तियाँ प्राप्त की जा सकती हैं जिनसे जीवन में कोई भी सार्थक व् सकारात्मक लक्ष्य प्राप्त किया जा सकता है। पतंजलि की इन योग शिक्षाओं को स्वामी विवेकानंद, स्वामी शिवानंद, महेश योगी, बाबा रामदेव जैसे योगियों ने दुनिया के कई देशों में पहुँचाया। प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी के भागीरथी प्रयासों से पूरा विश्व 21 जून को अंतरराष्ट्रीय योग दिवस मनाता है। पूरे विश्व समुदाय को घरों में कैद करने वाली कोरोना बीमारी में भी योग ने पीड़ितों को लाभ पहुँचाया। नियमित योग के कारण उनकी श्वषन क्षमता बढ़ी और वे स्वस्थ जीवन का आनंद ले सके। 'करो योग रहो निरोग' का आह्वान आज हमारी जीवनशैली का अंग बन चुका है जिसके लिए महर्षि पतंजलि का अतुलनीय योगदान है।

(लेखक, एकल विद्यालय अभियान के मीडिया सेल समन्वयक हैं)

ISSN No. 2581-3528

निपुण शिल्पकार और वास्तुकला विशेषज्ञ : भगवान विश्वकर्मा

मोनिका चौहान

हिंदू व्यापक रूप से विश्वकर्मा को वास्तुकला और इंजीनियरिंग के देवता के रूप में मानते हैं। ब्रह्मा के सातवें पुत्र के रूप में भगवान विश्वकर्मा पूजनीय हैं। विश्वकर्मा सभी शिल्पकारों और वास्तुकारों के पीठासीन देवता होने के साथ–साथ ब्रह्मा के यह पुत्र पूरे ब्रह्मांड के दिव्य ड्राफ्टमैन और सभी देवताओं के महलों के रचनाकार हैं। महर्षि अंगिरा के वंश में आदि शिल्पाचार्य भगवान विश्वकर्मा हुए हैं जिसका अर्थ है सृष्टिकर्ता अथवा विश्वरूपी कर्म को करने वाला। विश्वकर्मा भगवान को ब्रह्मांड का रचयिता भी माना जाता है। ऋग्वेद के अंतर्गत इन्हें सर्वश्रेष्ठ सत्य के तौर पर भी उल्लेखित किया गया है। भगवान विश्वकर्मा अपने नाम के अनुरूप अपने कार्य शक्ति विशेष से संपन्न होकर अवतरित हुए। इन्हें देवताओं का शिल्पी भी कहा जाता है। शिल्प स्थापत्य के देवता के रूप में विश्वकर्मा की जो मान्यता आज के भारतीय समाज में विद्यमान है वह ग्रंथों, ग्रह सूत्रों और पुराण काल की देन है। विश्वकर्मा देवता के प्रति यह प्रबल मान्यता है कि वे सर्वदृष्टा, सर्वश्रेष्ठा और सर्वज्ञाता हैं।

विश्वकर्मा भगवान के रूप का वर्णन किया जाये तो हिंदू धार्मिक ग्रंथ के दो सूत्रों में विश्वकर्मा की व्याख्या सर्व शक्तिमान के रूप में की गई है जिनके हर तरफ आंखें, चेहरे, हाथ, पैर, और पंख भी हैं लेकिन उनके अन्य चित्रण में उन्हें चार भुजा वाले और सफेद दाढ़ी वाले वृद्ध और बुद्धिमान व्यक्ति के रूप में दर्शाया है। भगवान विश्वकर्मा के अनेक रूप बताए जाते हैं– दो बाहु वाले, चार बाहु एवं दस बाहु वाले तथा एक मुख, चार मुख एवं पंचमुख वाले। उनके मनु, मय, त्वष्टा, शिल्पी एवं दैवज्ञ नामक पांच पुत्र हैं। यह भी मान्यता है कि ये पांचों वास्तु शिल्प की अलग–अलग विधाओं में पारंगत थे और उन्होंने कई वस्तुओं का आविष्कार किया। इस प्रसंग में मनु को लोहे से, तो मय को लकड़ी, त्वष्टा को कांसे एवं तांबे, शिल्पी ईंट और दैवज्ञ को सोने–चांदी से जोड़ा जाता है।

पुराणों में इनके निर्माण कार्य शक्तियों के अनेकों वर्णन मिलते हैं। निर्माण में सृजन के देवता कहे जाने वाले विश्वकर्मा के संदर्भ में कहा जाता है कि विष्णु भगवान का सुदर्शन चक्र, शंकर भगवान का त्रिशूल, यमराज का कालदंड, भगवान कृष्ण के लिए द्वारिकापुरी, ऋषि दधीचि की अस्थियों से इंद्र के लिए वज्र, युधिष्ठिर के लिए इंद्रप्रस्थ, सोने की लंका, पुष्पक विमान, सुदामापुरी, हस्तिनापुर, स्वर्गलोक व देवताओं के राजमहल और राजधानियों का निर्माण भी विश्वकर्मा ने ही किया था। ऐसी अपरिमित कथाओं से विश्वकर्मा भगवान की अलौकिक शक्ति प्रतीत होती है।

सोने की लंका से कौन परिचित नहीं होगा। कहा जाता है कि तत्कालीन समय में रावण की लंका धरती पर सबसे भव्य इमारत थी। माना जाता है कि श्रीलंका का निर्माण भगवान विश्वकर्मा ने शिव भगवान के लिए किया था। भगवान शिव ने माता पार्वती के लिए एक महल का निर्माण कराने की इच्छा से, वास्तु शास्त्र को जानने वाले और भवन निर्माण कला में दक्ष भगवान विश्वकर्मा को महल का निर्माण करने को कहा। भगवान शिव के आग्रह पर एक ऐसे भवन का निर्माण किया गया जो सोने से निर्मित था, जो वास्तुदोष से रहित और सुरक्षा की दृष्टि से विशेष था। स्वर्ण महल की सुंदरता देखते ही बनती थी। सोने की लंका के महलों की बनावट और नक्काशी देवताओं और राजा इंद्र द्वारा शासित स्वर्ग के समान ही उत्कृष्ट थी। कहा जाता है महल के पूजन के समय रावण भी वहां पहुंच गया। रावण शिव भगवान का अटूट भक्त था। रावण महल को देखकर मंत्रमुग्ध हो गया और शिव की आराधना कर सोने के इस अद्भुत महल को शिव से मांग लिया। भगवान शिव ने रावण को महल दे दिया और स्वयं पर्वतों पर चले गए। रावण लंका में आने वाले हर महत्वपूर्ण अतिथि को वहां के दर्शनीय स्थलों को बड़े गर्व के साथ दिखाता था।

सोने की लंका के अलावा ऐसे कई भवनों का निर्माण उन्होंने किया जो उस समय स्थापत्य और सुंदरता में अद्वितीय होने के साथ–साथ वास्तु के अनुसार भी महत्वपूर्ण थे। विश्वकर्मा द्वारा बनाए गए इंद्रप्रस्थ के स्थापत्य चमत्कार और सुंदरता के बारे में बताया जाता है कि महल के फर्श में पानी जैसा प्रतिबिंब था। महल बनने के बाद जब पांडवों ने कौरवों को आमंत्रित किया तो दुर्योधन अपने भाइयों सहित इंद्रप्रस्थ दर्शन के लिए आया। महल के अजूबों को नहीं जानते हुए दुर्योधन फर्श और तालाब का फर्क नहीं कर पाए थे। ऐसी अद्भुत रचना विश्वकर्मा भगवान ने की थी।

तकनीकी व विज्ञान के जनक भगवान विश्वकर्मा के बारे में यह भी कहा जाता है कि भगवान विश्वकर्मा को इतना अनुभव था कि वह अपनी कार्य शक्ति से पानी पर चलने वाली खड़ाऊ भी बना सकते थे। विश्वकर्मा भगवान ने सूर्य की ऊर्जा को खींचकर इसका उपयोग करके कई अदभुत हथियार भी निर्मित किये। वाल्मीकि रामायण के अनुसार शिल्पकार में निपुण नल नामक वानर जो विश्वकर्मा का पुत्र था, राम सेतु का निर्माण उसी ने किया।

शिल्प कार्यों और वास्तु कार्यों में भगवान विश्वकर्मा के पूजन का विशेष महत्व है इसी कारण से आज भी औद्योगिक क्षेत्रों में, कल –कारखानों में, मशीनरी से संबंधित सभी स्थानों में भगवान विश्वकर्मा का पूजन कार्तिक मास में 17 सितंबर को विधिपूर्वक कर भगवान विश्वकर्मा को याद किया जाता है। विश्वकर्मा पूजन भगवान विश्वकर्मा को समर्पित एक दिन है। भारत के कई हिस्सों में इस दिन काम बंद रखा जाता है। सभी प्रकार के औजारों के पूजन के उपरांत सुख समृद्धि की कामना की जाती है।

(लेखिका शिक्षिका हैं)

ISSN No. 2581-3528

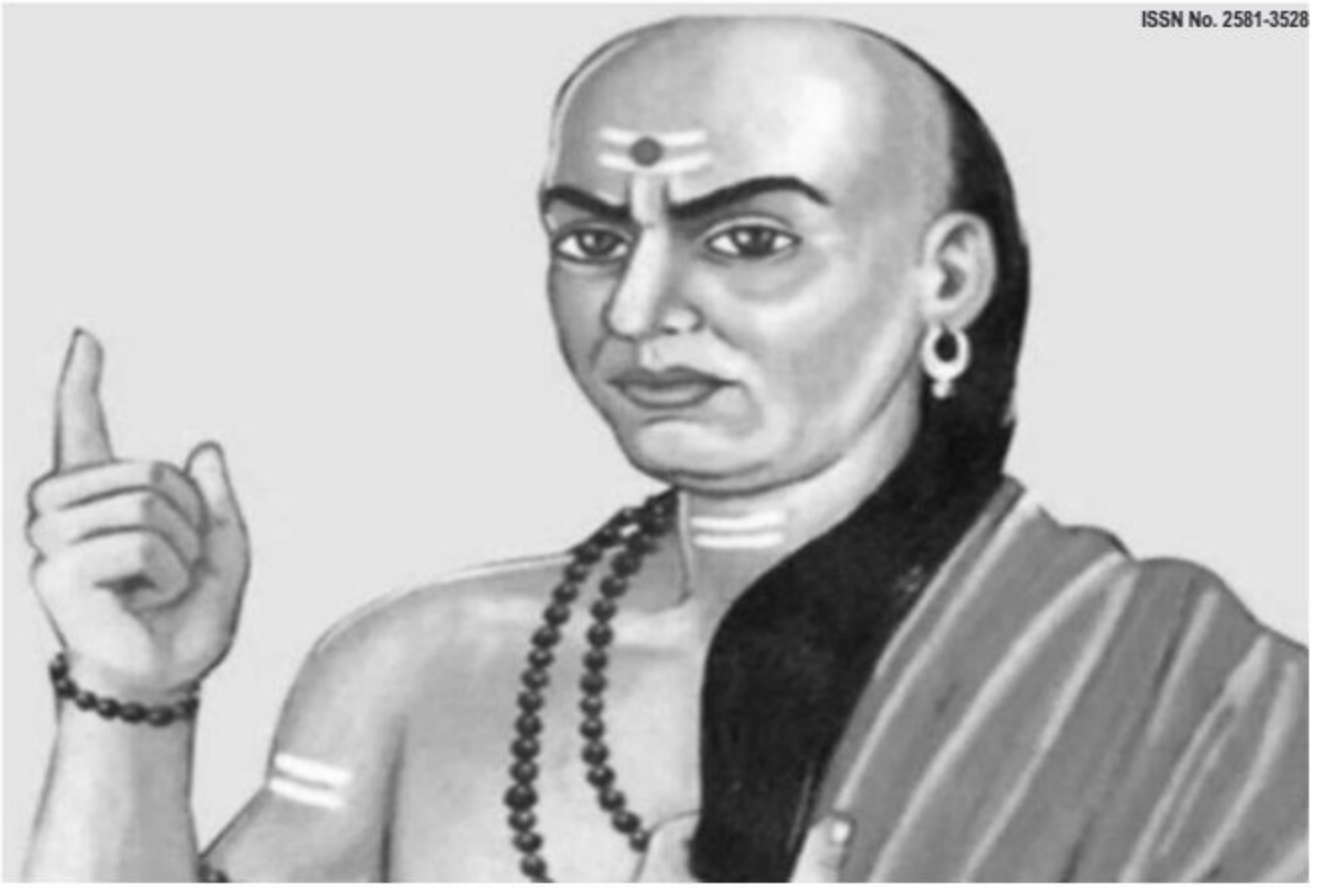

आचार्य चाणक्य रचित "अर्थशास्त्र" ज्ञान एवं विज्ञान की अनूठी धरोहर

प्रो. अखिलेश मिश्र

भारतवर्ष लम्बे काल खंड तक अपनी आर्थिक संवृद्धि, व्यवस्थित सुशासन प्रणाली, ज्ञान एवं विज्ञान की अनूठी परम्परा, आदर्श संस्कृति के अमूल्य धरोहर के कारण विश्वगुरु के आसन पर विराजमान रहा। इस स्थान को प्राप्त करने एवं उसे बनाये रखने में अग्रणी योगदान देश के ऋषि, महर्षि, गुरुओं एवं शिक्षको का महत्वपूर्ण योगदान रहा। भारत वर्ष के विद्वानों का सम्पूर्ण जीवन, नवीनतम ज्ञान की खोज, वैज्ञानिक चर्चा एवं विमर्श को प्रोत्साहित करने तथा समृद्ध ज्ञान अधः संरचनाओं के निर्माण को समर्पित रहा। इस परम्परा को मजबूत आधार देने में 'आचार्य चाणक्य' का नाम अग्रणी पंक्ति में आता है। वे न केवल एक महान शिक्षक और दार्शनिक थे बल्कि, वे चिकित्सा, ज्योतिषी, राज्य प्रबंधन तथा युद्ध रणनीति एवं कूटनीति के उच्च कोटि के विद्वान थे। अपनी विद्वता एवं कुशल रणनीति के दम पर ही उन्होंने न विलासी एवं अकर्मण्य बन चुके 'नन्दवंश' को भारत की सत्ता से पदच्युत किया तथा राष्ट्रहित में अपने शिष्य चन्द्रगुप्त के माध्यम से मौर्य साम्राज्य को स्थापित करवाया ताकि, विदेशियों खासतौर पर यमनो के आक्रमण से राष्ट्र की सीमाओं को सुरक्षित कर राष्ट्र के वैभव को पुनर्स्थापित किया जा सके।

आचार्य चाणक्य के जन्मस्थान को लेकर विद्वान एक मत नहीं है किन्तु, इतिहास के अनेक संदर्भों में उन्हें कौटिल्य अथवा विष्णुगुप्त के नाम से भी जाना जाता हैं। विद्वान ऐसा मानते है कि श्री चणक के पुत्र होने के कारण वह चाणक्य कहे गए जबकि, कूटनीति, अर्थनीति, राजनीति के महाविद्वान होने के कारण उन्हें विष्णुगुप्त तथा जनकल्याण तथा अखंड भारत के निर्माण जैसे महान लक्ष्यों को प्राप्त करने में महाज्ञान के 'कुटिल सदुपयोग की वकालत' करने के कारण उन्हें 'कौटिल्य' कहा गया। जन्म के उपरान्त इनके माताजी का निधन हो गया था। राज ज्योतिष ने इनके बारे में भविष्यवाणी की थी कि इस बालक में राजयोग भले ही न हो किन्तु, इस बालक में चमत्कारिक ज्ञानयोग व विद्वता होगी तथा यह सूर्य के प्रकाश के समान सम्पूर्ण जम्बू द्वीप के आलोक को विश्व में फैलाएगा जो बाद में अक्षरशः सत्य साबित

ISSN No. 2581-3528

हुई। वे विश्वप्रसिद्ध तक्षशिला विश्वविद्यालय के आचार्य थे। आचार्य चाणक्य ने अनेकों पुस्तकें लिखी किन्तु उनको ख्याति सुप्रसिद्ध पुस्तक "अर्थशास्त्र" से मिली। अपनी झूठी नस्लीय श्रेष्ठता को साबित करने एवं भारतीयों को हीन बताने के लिए अर्थशास्त्र जैसी पुस्तक के अस्तित्व को लम्बे समय तक नकारा जो भारत की समृद्धि एवं स्वस्थ ज्ञान परंपरा तथा सुशासन प्रणाली का जीवंत दस्तावेज है।

यह पुस्तक बतलाती है कि भारत में ज्ञान की शाखाओं को एकांगी एवं एकनिष्ठ संकाय में बाँधने के स्थान पर बहु विध बहु संकाय तथा अन्तर विषयक रखने की स्वस्थ परम्परा रही है। आचार्य चाणक्य द्वारा उपदेशात्मक और सलाहात्मक (instructional) शैली में लिखे गये ग्रन्थ "अर्थशास्त्र" में आदर्श राज्यव्यवस्था, उन्नत कृषि, न्याय एवं राजनीति आदि के विभिन्न पहलुओं के विमर्श पर विस्तृत प्रकाश डालती है। चाणक्य ने अर्थशास्त्र में सप्तांग जैसी व्यवस्था के अंतर्गत व्यवहारिक राजनीति एवं अर्थनीति की बात करती है इसमें "वरक" शब्द का प्रयोग किया गया है जिसका शाब्दिक अर्थ है राष्ट्रीय अर्थशास्त्र। अर्थशास्त्र को परिभाषित करते हुए कौटिल्य नें लिखा कि, 'मनुष्य की आजीविका और मनुष्य द्वारा उपयोग में ली जा रही भूमि दोनों को ही अर्थ के नाम से पुकारा जाता है। ऐसी भूमि को ग्रहण करने एवं सुरक्षा से जुड़े साधनों का विवेचन करने वाले शास्त्र को अर्थशास्त्र कहा जाता है।' कौटिल्य ने धर्म, अर्थ एवं काम तीनों ही पुरुषार्थों को एक समान महत्त्व दिया तथा लिखा कि जो भी व्यक्ति इन तीनों में असंतुलन पैदा करता है वह अपने दुःखी रहने का कारण स्वयं बनता है।

कौटिल्य ने राज्य के व्यय को सुचारू रूप से चलाने के लिए जनता से अनिवार्य कर लेने की वकालत की। पुस्तक के अनुसार सरकार को बाहर से आने वाले उत्पादों पर आयात कर एवं देश के अन्तर्गत उत्पादित एवं परिवहन पर चुंगी शुल्क की व्यवस्था करने को कहा। देश में उत्पादित वस्तुओं पर कर, पथकर, वनों के प्रयोग पर भी करों के आदेश करना आवश्यक माना गया। राज्य द्वारा निश्चित किये जाने वाले आय और व्यय की सीमा के संबंध में कौटिल्य का मानना था कि राज्य के द्वारा किये जाने वाला व्यय उसकी आय के अनुसार ही तय किया जाना चाहिए।

कौटिल्य श्रम कल्याण की व्यवस्था की वकालत करते थे। वे चाहते थे कि श्रमिकों की मजदूरी न्यूनतम जीवन–निर्वाह सिद्धान्त के अनुसार तय होना चाहिए। मजदूरों के पारिश्रमिक की दरें, समय, स्थान तथा उनकी दशाओं को ध्यान में रखकर तय की जानी चाहिए।

कौटिल्य ने राज्य के सभी व्यवसायों को तीन वर्गों यथा कृषि, पशुपालन एवं वाणिज्य में विभाजित किया। इन तीनो में कृषि को सर्वाधिक महत्वपूर्ण माना गया। कौटिल्य का सुझाव दिया था कि कृषि के विकास के लिए राजा को चाहिए कि वह बेकार भूमि पर किसानों को रहने एवं जोतने की अनुमति दे इतना ही नहीं राज्य को उन्हें बीज, बैल सिंचाई सुविधा सहित अन्य कार्यों पर सहायता देनी चाहिए। कर के पैसे से सिंचाई के लिए तालाबों और कुँओं का निर्माण कराना, बांधों का प्रबंध कराना राजा के अधिकार क्षेत्र और कर्तव्यों में शामिल होना चाहिए।

भारत वर्ष के विद्वानों का सम्पूर्ण जीवन, नवीनतम ज्ञान की खोज, वैज्ञानिक चर्चा एवं विमर्श को प्रोत्साहित करने तथा समृद्ध ज्ञान अध: संरचनाओं के निर्माण को समर्पित रहा। इस परम्परा को मजबूत आधार देने में 'आचार्य चाणक्य' का नाम अग्रणी पंक्ति में आता है। वे न केवल एक महान शिक्षक और दार्शनिक थे बल्कि, वे चिकित्सा, ज्योतिषी, राज्य प्रबंधन तथा युद्ध रणनीति एवं कूटनीति के उच्च कोटि के विद्वान थे।अपनी विद्वता एवं कुशल रणनीति के दम पर ही उन्होंने न विलासी एवं अकर्मण्य बन चुके 'नन्दवंश' को भारत की सत्ता से पदच्युत किया तथा राष्ट्रहित में अपने शिष्य चन्द्रगुप्त के माध्यम से मौर्य साम्राज्य को स्थापित करवाया।

कौटिल्य दासप्रथा को मानवता के विरुद्ध और अवैध कृत्य मानते थे। उनका मानना था कि यदि कोई व्यक्ति किसी को अपना दास बनने के लिए विवश करता है तो ऐसी स्थिति में बाध्य करने वाले व्यक्ति को कठोर दंड दिया जाए। कौटिल्य के अनुसार राज्य को सामाजिक सुरक्षा की दृष्टि से अनेक कार्य जैसे–संकट के समय में गरीबों की सहायता हेतु संस्थाओं की स्थापना, वृद्ध और अपाहिज व्यक्तियों के लिए आश्रमों की व्यवस्था करनी चाहिए। बेरोजगार व्यक्तियों के लिए ये उचित रोजगार का प्रबंध करना अति आवश्यक है। गरीबों और कामगार लोगों को उनके परिश्रम के बदले उचित मजदूरी दिलाना भी एक महत्वपूर्ण कर्तव्य होना चाहिए।

आचार्य चाणक्य शिक्षा के महत्व पर प्रकाश डालते हुए लिखते है कि, शिक्षा के बिना मनुष्य का जीवन कुत्ते की पूंछ की तरह होता है, जिसका कोई अस्तित्व नहीं होता। अनपढ़ व्यक्ति का समाज में कोई महत्व नहीं होता, ऐसे व्यक्ति को लोग बोझ की तरह देखते हैं। एक शिक्षित व्यक्ति किसी भी कार्य को सफलता पूर्वक कर सकता है। यदि आपके पास ज्ञान नहीं है तो आप सरल से सरल कार्य भी नहीं कर पाएंगे। जीवन के अंधकार को शिक्षा से ही दूर किया जा सकता है। जिस व्यक्ति के पास शिक्षा रूपी मसाल होती है अंधेरा उससे कोसों दूर रहता है। इसलिए व्यक्ति को सर्वप्रथम शिक्षा ग्रहंण करनी चाहिए।

कौटिल्य द्वारा रचित "अर्थशास्त्र" का सन्दर्भ व्यापक है जबकि, पाश्चात्य अर्थशास्त्रियों द्वारा प्रतिपादित व्यक्ति केन्द्रित आर्थिक सिद्धांत न केवल संकुचित है बल्कि, राष्ट्रीयता, नैतिकता एवं सामाजिक संवेदना से व्यक्ति को च्युत करता है। आचार्य चाणक्य ने लिखा कि, "सुखस्य मूलम धर्मः, धर्मस्य मूलम अर्थः। अर्थात् सुख, धर्म मूलक है, तो धर्म अर्थ मूलक। अर्थ के बिना धर्म नहीं टिकता। उनके अनुसार "मनुष्य, मन, बुद्धि आत्मा तथा शरीर चारों का समुच्चय है। लोगो के भरण पोषण के लिए, जीवन विकास के लिए एवं राष्ट्र की विकास के लिए जिन साधनों की आवश्यकता होती है उसका उत्पादन ही अर्थव्यस्था का लक्ष्य होना चाहिए"। पाश्चात्य विद्वान अब मानने लगे है कि किसी भी देश को सशक्त, समृद्ध एवं आत्मनिर्भर बनाने का मूल मन्त्र आज भी कौटिल्य द्वारा प्रतिपादित अर्थशात्र में उपलब्ध है जिस कारण इसे कालजयी रचना कहने में कोई संकोच नही है। हर भारतीय को चाणक्य रचित 'अर्थशात्र' का अध्ययन करना चाहिए।

(लेखक शम्भू दयाल पीजी कॉलेज, गाजियाबाद में प्राचार्य हैं)

ISSN No. 2581-3528

महान सनातनी चिकित्सक महर्षि चरक

कुं. चंद्र शेखर सिंह

अग्निवेशे कृते तन्त्रे, चरकः प्रति संस्कृते।
यदिहास्ति तदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत्क्वचित्॥

भारत के महान ऋषि महर्षि चरक आयुर्वेद के जन्मदाता कहे जाते हैं। उनकी गिनती प्राचीन भारत के महान चिकित्साशास्त्री के रूप में की जाती है। उन्होंने आयुर्वेद पर आधारित महान ग्रंथ की रचना की।

प्राचीनकाल में ऋषियों को दो प्रकार का माना गया है, शालीन और यायावर। शालीन प्रकार के ऋषि कुटी बनाकर रहते थे और यायावर ऋषि घूमते रहते थे। चरक भी यायावर कोटि के ऋषि थे जो एक स्थान पर नही रहते थे। महर्षि चरक को लेकर इतिहासकारों द्वारा कहा जाता है कि वे एक प्रसिद्ध ऋषि पुत्र थे। उन्हें आयुर्वेद के बल पर रोगियों के इलाज में महारत हासिल थी। अपनी चिकित्सा के बल पर वे मरणासन्न रोगी को भी मौत के मुँह से छीन कर भला–चंगा कर देते थे।

महर्षि चरक का जन्म आज से लगभग 2000 वर्ष पूर्व हुआ माना जाता है। कुछ ग्रंथो के अनुसार इन्हें कनिष्क प्रथम के समकालीन माना जाता है। चरक एक महर्षि एवं आयुर्वेद विशारद के रूप में विख्यात हैं, इनके द्वारा रचित चरक संहिता एक प्रसिद्ध आयुर्वेद ग्रन्थ है, इसमें रोगनाशक और रोगनिरोधक दवाओं का उल्लेख है साथ ही सोना, चादी, लोहा, पारा आदि धातुओं के भस्म और उनके उपयोग का वर्णन मिलता है। उनकी गणना भारतीय औषधि विज्ञान के मूल प्रवर्तकों में होती है। प्राचीन साहित्य में इन्हें शेषनाग का अवतार भी बताया गया है। तक्षशिला से शिक्षा हासिल करने वाले आचार्य चरक द्वारा रचित ग्रंथ 'चरक संहिता' आज भी वैद्यक का अद्वितीय ग्रंथ माना जाता है।

चरक संहिता में व्याधियों के उपचार तो बताए ही गए हैं, प्रसंगवश स्थान–स्थान पर दर्शन और अर्थशास्त्र के विषयों का भी उल्लेख है। चरक ने भ्रमण करके चिकित्सकों के साथ बैठकें की, विचार एकत्र किए और सिद्धांतों को प्रतिपादित किया और उसे पढ़ाई लिखाई के योग्य बनाया। यह ग्रंथ संस्कृत भाषा में लिखा गया है। कलांतर में जाकर इस महान ग्रंथ 'चरक संहिता' का अरबी में भी अनुवाद हुआ।

हमारे वेदों में चिकित्सा–ज्ञान जगह–जगह पर वर्णित है। इस ज्ञान को परिष्कृत करके 8 खंडों और 120 अध्यायों में बाँटकर चिकित्सा–शास्त्रियों द्वारा उपयोग में लाने लायक बनाने वाले आचार्य चरक की 'चरक संहिता' वास्तव में दो विद्वानों (गुरु व शिष्य) के बीच संवाद के रूप में है। यह केवल चिकित्सा–ज्ञान तक सीमित नहीं है, इसमें जीवन जीने के व्यापक उद्देश्यों और उनकी पूर्ति की व्यापक चर्चा भी की गई है। इसमें व्यक्ति को कैसे स्वस्थ रहना है, यह भी समझाया गया है और वैद्य को किस प्रकार से व किस भाव से उपचार करना चाहिए, यह भी बतलाया गया। वैद्य को सलाह दी गई है कि वह प्राणिमात्र से मित्रता का व्यवहार रखे, रोगी के प्रति दया भाव बनाए, साध्य रोगों की प्रेमपूर्वक चिकित्सा करे और असाध्य रोगों की उपेक्षा करे। इसका अर्थ है कि यदि वैद्य आश्वस्त हो जाए कि रोग ठीक नहीं हो सकता तो उसे जबरन चिकित्सा नहीं करनी चाहिए। इसमें सुखी जीवन हेतु शरीर और मन को स्वस्थ रखने, इंद्रियों के दृढ़ होने, उचित आहार द्वारा प्रसन्नता लाने की बात कही गई है। आचार्य चरक ने बतलाया कि संसार के सभी

ISSN No. 2581-3528

द्रव्य औषधीय गुणों से पूर्ण होते हैं। वात, पित्त एवं कफ औषधि विज्ञान की आधारशिला हैं। 'चरक संहिता' में शरीर में ओज अर्थात् विद्युत् की उपस्थिति का भी वर्णन किया गया है। इसमें शरीर के अंदर विद्युत् प्रवाह का भी वर्णन है। त्वचा, छह अंगों, दो बाँहों, दो पैरों, ग्रीवा सहित सिर तथा मध्य शरीर का वर्णन है। अस्थियों की गणना नीचे से की गई है और इनकी संख्या 360 बतलाई गई है। आचार्य चरक ने शरीर के भिन्न–भिन्न भागों का विस्तार से वर्णन किया। उन्होंने शरीर में नौ छिद्रों (दो आँखों, दो कानों ,दो नाक, एक मुख, एक गुदा तथा एक मूत्र मार्ग) का वर्णन किया। साथ ही 900 स्नायु शिराओं, 200 धमनियों, 400 पेशियों, 107 मर्म, 200 संधियों, 29,956 शिराओं का भी वर्णन किया। उनके अनुसार, इनमें कमी रोगों को जन्म देती है। आचार्य चरक ने सिर ढककर, पैरों में जूते–चप्पल पहनकर चलने की सलाह दी है। भोजन का और मांस के गुणों का भी वर्णन किया है, साथ ही विभिन्न प्रकार के शाकों, जैसे–नीम की पत्ती, मूँग, मटर, उड़द आदि की पत्तियों का वर्णन किया है। कंद–मूलों व बादाम–अखरोट जैसे मेवों का भी वर्णन किया है। जहाँ एक ओर विभिन्न पहलुओं में बरसने वाले जल के गुणों का वर्णन किया है, वहीं सुरा व मद्यपान के गुण–दोषों की भी विवेचना की है और यह भी बताया है कि विधिपूर्वक मद्यपान से भय, शोक, थकावट दूर होते हैं।

उनके पास हिमालय से निकलनेवाली नदियों के जल के गुणों का भी ज्ञान था और पूर्वी तथा पश्चिमी समुद्रों में गिरनेवाली नदियों के जल का बारीक अंतर भी उन्होंने समझाया। विभिन्न स्थानों पर गंगा के प्रवाह, आलस्य के कारण उत्पन्न होने वाले रोगों, चिकित्सालय के निर्माण के समय बरती जाने वाली सावधानियों, उत्पन्न की जाने वाली व्यवस्थाओं जैसे पानी की व्यवस्था, शौचालय आदि के बारे में विस्तार से बतलाया गया है। उस समय उपचार यंत्रों से भी होता था और मंत्रों से भी। सूक्ष्म आकार की कृमियों, जो दाढ़ी–मूँछ के बालों, गंदे कपड़ों में वास करती हैं, को निकालने हेतु यंत्र विकसित थे और इन कृमियों के गुणों, जैसे पैरों की संख्या, त्वचा, रक्त आदि पर इनके प्रभाव का भी वर्णन किया गया है। हृदय रोग की पीड़ा, जैसे– धड़कन का बढ़ना, छाती भारी होना, पसीना आना आदि का वर्णन किया गया है। आचार्य चरक के काल में मनोविज्ञान भी उन्नत था और उन्होंने उन्माद व उसके निदान का वर्णन किया है। मानसिक रोगी की उपयुक्त चिकित्सा के उपाय जैसे मनोनुकूल विषय याद दिलाना, गाना बजाना आदि के बारे में बतलाया गया है। यह भी बताया कि शरीर मन को प्रभावित करता है और मन शरीर को। अतः मानसिक रोगों का उपचार करते समय शरीर को भी औषधियों द्वारा स्वस्थ किया जाना चाहिए।

आज भले ही चार्ल्स डार्विन को आनुवांशिकी के सिद्धांतों का जनक माना जाता है। लेकिन उनके चरक संहिता के पठन से लगता है कि चरक को आज से हजारों साल पहले आनुवांशिकी सिद्धांतों का ज्ञान था।

उन्होंने अपंग बच्चा पैदा होने, बच्चे में अंधता और लंगड़ापन का कारण माता–पिता के किसी दोष के कारण होते हैं इसकी विवेचना की है जिसे आज का चिकित्सा जगत भी स्वीकार करता है।

आचार्य ने स्वप्न की महिमा का भी बखान किया है और स्वप्न की विकृतियों को उन्माद का पूर्व लक्षण बताया है। विक्षिप्त व्यक्तियों के लिए विभिन्न उपचारों, जैसे – ऊपर से जल गिराना, चंदन का लेप लगाना, रस्सी से बाँधना आदि की अनुशंसा की गई है। महामारियों की उत्पत्ति व फैलने के कारणों तथा प्रभाव का भी वर्णन किया गया है। दूषित अन्न, दूषित जल, दूषित वायु, मच्छर, टिड्डी, मक्खियों, चूहों के प्रभावों को समझाया गया है। मंत्र द्वारा चिकित्सा का भी वर्णन किया गया है।

कुल मिलाकर 'चरक संहिता' एक ऐसा अद्भुत ग्रंथ है, जिसमें उस काल की चिकित्सा–विज्ञान की समस्त उपलब्धियों को समेटा गया है। यह माना जाता रहा है कि जो ज्ञान इसमें नहीं है, वह कहीं नहीं है। प्राचीन काल में वैद्य कर्म करने हेतु शिक्षा पूरी करनेवालों को आचार्य चरक के नाम की शपथ लेनी होती थी। 'चरक संहिता' आज भी शोध का विषय है।

सुश्रुतो न श्रुतो येन, वाग्भटो येन वाग्भटः।
नाधितश्च चरक येन, स वैद्यो यम किंकरः॥

(लेखक शिक्षाविद एवं अधिवक्ता हैं)

केशव संवाद मासिक पत्रिका के डिजिटल
प्लेटफॉर्म से जुड़ें एवं
केशव संवाद को सोशल मीडिया
पर **FOLLOW** करें।

केशव संवाद

FACEBOOK

Keshav Samvad @keshavsamvad @KeshavSamvad samvadkeshav

ISSN No. 2581-3528

भारत की प्रथम महिला शिक्षिका

डॉ. प्रदीप कुमार

भारत विश्व इतिहास में सर्वाधिक प्राचीन देश है जहां शिक्षा की समुचित व्यवस्था रही है। शिक्षा प्राप्त करने हेतु संपूर्ण विश्व से शिक्षार्थी यहां आया करते थे।

यहां नालंदा, तक्षशिला, विक्रमशिला आदि अनेकों विश्व प्रसिद्ध विश्वविद्यालय रहे जहां पर विश्व भर के विद्यार्थी अध्ययनरत थे। सर्वविदित है कि किसी भी समाज के निर्माण में शिक्षक की अहम भूमिका होती है, क्योंकि शिक्षक ही समाज को सही दिशा देने की क्षमता रखता है। अपनी सृजनात्मक क्षमता के द्वारा वह न केवल समाज में क्रांति ला सकता है, अपितु नवाचारों को स्थापित करके नए शैक्षिक परिवेश और उन्नत वातावरण का निर्माण भी कर सकता है।

रामायण– महाभारत काल से यह परम्परा चली आ रही है। भारत की समृद्ध शिक्षा परम्परा में मातृशक्ति का भी विशेष योगदान रहा है। पराधीनता काल में स्त्रियों के अधिकारों, अशिक्षा, छुआछूत, सतीप्रथा, बाल या विधवा–विवाह जैसी कुरीतियां समाज में व्यापक स्टार पर फैल चुकी थी, समय–समय पर महान आत्माएं समाज को इनसे मुक्त करने के लिए प्रयत्नशील रही हैं। उस काल में इन कुरीतियों के विरुद्ध आवाज उठाने वाली देश की पहली महिला शिक्षिका को कौन नहीं जानता है? ये महान आत्मा थीं महाराष्ट्र में जन्मीं सावित्री बाई फुले, जिन्होंने अपने पति दलित चिंतक समाज सुधारक महात्मा ज्योति राव फुले से शिक्षा पाकर सामाजिक चेतना फैलाई। उन्होंने अंधविश्वास और रूढ़ियों की बेड़ियां तोड़ने के लिए लम्बा संघर्ष किया।

भारत की पहली महिला शिक्षिका सावित्री बाई फुले भारतीय इतिहास का ऐसा नाम है, जिन्होंने लड़कियों की पढ़ाई के लिए रुढ़िवादियों के पत्थर तक खाए लेकिन पीछे नहीं हटी। अंग्रजों का शासन होने के कारण लड़कियों की शिक्षा के लिए आवाज उठाना सावित्री बाई के लिए ओर भी मुश्किल रहा लेकिन उन्होंने लड़को–लड़कियों के बीच भेदभाव को मिटाने का प्रण लिया था। 3 जनवरी, 1831 को महाराष्ट्र में जन्मी सावित्री बाई फुले को बचपन से ही पढ़ने में रूचि थी लेकिन 9 साल की उम्र में उनकी शादी 12 साल के ज्योतिराव फुले से कर दी गई थी। जब सावित्री के परिवार व ससुराल वाले दोनों उनकी शिक्षा के विरुद्ध हो गए तब उनके पति ज्योतिराव ने उनका साथ दिया। ज्योतिराव ने न केवल उनके सपनों को समझा बल्कि उन्हें पढ़ाने का निर्णय भी लिया। जब वह अपने पति ज्योतिराव को खेतों में खाना देने जाया करती तब वह उन्हें पढ़ाते थे। विरोध के बावजूद उन्होंने सावित्री को स्कूल भेजा और अध्यापक प्रशिक्षण संस्थान में शिक्षा प्राप्त कराई। समाज व परिवार की तरफ से उन्हें पत्नी या घर किसी को चुनने को कहा उन्होंने सावित्री का साथ दिया और घर छोड़ दिया। उन्होंने बाकी लड़कियों को भी शिक्षा दिलवाने की ठानी। नतीजन सावित्री ने भारत की पहली महिला शिक्षिका बन न सिर्फ स्कूल खोले बल्कि लड़कियों के लिए प्रचलन में आ चुकी अशिक्षा की रूढ़ी को भी हटाया। उन्होंने 1 जनवरी 1848 को पुणे में पहले बालिका विद्यालय की शुरूआत की। वह इस स्कूल की प्रिंसिपल के साथ शिक्षिका भी थी।

जब सावित्री स्कूल पढ़ाने जाया करती थी तो रुढ़िवादी मानसकिता के लोग उन पर गोबर व पत्थर फेंकते थे लेकिन वहीं समाज के जागरूक लोग उनका समर्थन भी करते थे, समाज के सकारात्मक लोगों के सहयोग एवं अपने पति की प्रेरणा से वे अपने–अपने संकल्प पर डटी रही। शुरूआत में तो लोग अपनी बेटियों को पढ़ने के लिए भेजते भी नहीं थे लेकिन सावित्री की कोशिशों से लोग धीरे–धीरे इसके महत्वप को समझने लगे। सावित्री ने सिर्फ लड़कियों की पढ़ाई ही नहीं बल्कि ओर भी कई सराहनीय काम किए। उन्होंने 'बालहत्या प्रतिबंधक गृह' नाम का केयर सेंटर शुरू किया। इसमें गर्भवती व बच्चे का पालन पोषण न कर पाने वाली महिलाओं की देखभाल की जाती थी। उनकी कोई संतान नहीं थी, उन्होंने एक विधवा महिला के बेटे यशवंतराव को गोद लिया और मां की तरह उसकी परवरिश की।

निष्कर्षतया हम कह सकते हैं की नारी प्रेरणा की स्रोत सावित्रीबाई भारत की प्रथम अध्यापिका, समाजसेवी, क्रांतिकारी महिला तो है ही साथ ही भारत में स्त्री मुक्ति आंदोलन की नेता भी हैं। उन्होंने जिस स्त्री मुक्ति आंदोलन का सूत्रपात किया था उसकी बदौलत ही आज अनेक महिलाएं उच्च पदों पर पहुंच सकी हैं। इस प्रकार सावित्रीबाई का नारी उत्थान में जो अभूतपूर्व योगदान था वह आज भी किसी न किसी रूप में विद्यमान है। भारत की हर शिक्षित नारी उनकी ऋणी है। अतः प्रत्येक शिक्षित नारी का यह कर्तव्य है कि वह इस महान नारी सावित्रीबाई फुले से देश की सभी नारियों को अवगत कराएं। शिक्षा के क्षेत्र में जितना कार्य फुले दंपति ने किया है वह इतिहास के पन्नों में स्वर्ण अक्षरों में लिखे जाने का हकदार है।

भारत की ऐसी महान नारियों को वर्तमान पीढ़ी से अवगत कराने के उचित प्रयास नहीं किये गए हैं, देश में चल रहे महिला संगठनों ने भी कहीं न कहीं उनकी अवहेलना की है, परंतु समय बदला है महाराष्ट्र राज्य महिला संगठन ने इस दिशा में अच्छी पहल की है। सावित्रीबाई पूरे देश का गौरव हैं और देश की जागरूक जनता का यह कर्तव्य बनता है कि वे भारतीय नारी शिक्षा की प्रथम हिमायती नारी से अपने देश को परिचित कराएं। आज फुले दंपत्ति के कार्य उपलब्धि व प्रेरणा से भारत के अन्य राज्यों की सामाजिक स्थिति में क्रांतिकारी परिवर्तन देखने को मिलता है परंतु फुले दंपत्ति के गुणों का कार्यों का उचित परिमार्जन एवं सम्मान पूरे भारतवर्ष में अब तक प्राप्त नहीं हो सका है। राष्ट्र के प्रति महत्वपूर्ण महापुरुषों के साथ ही विश्व के महानतम लोगों की श्रेणी में भी उनका महत्वपूर्ण स्थान है जिसकी उपेक्षा नहीं होनी चाहिए थी, इस पर उनका अधिकार है। महात्मा बुद्ध, कबीर, मार्टिन लूथर किंग जैसे महान लोगों की पंक्ति में फुले दंपत्ति का स्थान नियत किया जाना चाहिए । वह स्त्री शिक्षा की प्रणेता हैं। वास्तव में आदर्श नागरिक ही आदर्श राष्ट्र के निर्माण में मुख्य भूमिका निभाते हैं। राष्ट्रीय भावना का संचार करना एक आदर्श शिक्षक का ही कार्य है वह अपनी शिक्षा द्वारा छात्रों में राष्ट्रीय एकता और देशभक्ति का संचार करता है वह अपनी रचनात्मकता एवं सृजन क्षमता से नये भारत के निर्माण में सर्वाधिक योगदान देने की क्षमता रखता है। जिसे सावित्रीबाई फुले ने अपने कर्मठ जीवन से सिद्ध करके दिखाया है।

(लेखक सत्यवती कॉलेज (सांध्य) दिल्ली विश्वविद्यालय में असिस्टेंट प्रोफेसर हैं)

ISSN No. 2581-3528

पहली महिला सर्जन : डॉ. मुथुलक्ष्मी रेड्डी

डॉ. प्रियंका सिंह

कहते हैं वही समाज प्रगतिशील होता है जहां की महिलाएं पढ़ी लिखी होती हैं। वह पहली शिक्षिका होने के साथ–साथ समाज को एक सुसंस्कृत, संस्कारवान व सुदृढ़ आकार प्रदान करने में अहम भूमिका का निर्वहन भी करती है। आज हम बात करेंगे ऐसी ही दृढ़ निश्चय व महिलाओं के अधिकारों के प्रति सजग डॉ मुथुलक्ष्मी रेड्डी जी के बारे में। डॉ मुथुलक्ष्मी रेड्डी जी का जन्म 30 जुलाई 1886 में पुडुकोट्टई तमिलनाडु में हुआ था। उनके पिता नारायण स्वामी अय्यर महाराजा कॉलेज में शिक्षक थे एवं माता चंद्रामाई देवदासी समुदाय से थी। डॉ रेड्डी एक स्वतंत्रता सेनानी के साथ–साथ राजनीतिज्ञ चिकित्सक एवं शिक्षिका भी रही। बचपन से ही पढ़ाई में अव्वल रहने वाली मुथुलक्ष्मी की प्रारंभिक शिक्षा घर पर ही हुई। उस समय लड़कियों का स्कूल में प्रवेश स्वीकार्य नहीं किया जाता था जिसके कारण उन्हें महाराजा हाई स्कूल में प्रवेश न मिल सका। लेकिन उनके दृढ़ निश्चय, आत्मविश्वास एवं रुचि से प्रभावित होकर पुडुकोट्टई के महाराजा ने आगे की पढ़ाई के लिए प्रोत्साहित किया जिसके फलस्वरूप उन्हें लड़कों के विद्यालय में प्रवेश मिला और छात्रवृत्ति भी प्राप्त हुई। निश्चित रूप से विद्यालय में प्रवेश लेने वाली वह अकेली छात्रा थी। पढ़ाई के प्रति उनका लगाव एवं कुछ करने की इच्छा शक्ति ने अच्छे परीक्षाफल में परिवर्तित किया जिस पर सभी को बहुत आश्चर्य हुआ। 1912 में उन्होंने मद्रास मेडिकल कॉलेज से मेडिकल की पढ़ाई पूरी की एवं सर्जरी में विशेषज्ञता हासिल की। किसी भी भारतीय विश्वविद्यालय से चिकित्सा की शिक्षा लेने वाली वह पहली महिला थी। निश्चित रूप से उनकी इस प्रतिभा को उनके पिताजी ने पहचाना और आगे बढ़ने के लिए प्रेरित किया। 1913 में किंग जॉर्ज अस्पताल के सर्जन डॉक्टर सुंदर रेड्डी के साथ इनका विवाह हुआ और विवाह के लिए उनकी शर्त थी कि सामाजिक गतिविधियों, महिलाओं के सशक्तिकरण एवं जरूरतमंदों की चिकित्सीय सहायता करने के लिए वह स्वतंत्र रहेंगी।

कॉलेज में शिक्षा प्राप्त करते समय ही उनका परिचय इन बेसेंट और सरोजनी नायडू से हुआ। जिनके विचारों से बहुत

प्रभावित हुई और चिकित्सा क्षेत्र को छोड़कर राजनीति की ओर चली गई जिसके फलस्वरूप वह मद्रास विधान सभा की पहली महिला सदस्य भी बनी। उन्होंने महिलाओं के अधिकारों के लिए अनेक पहल की साथ ही सामाजिक कुरीतियों को रोकने के लिए कानून बनाने में अहम भूमिका निभाई जैसे बाल विवाह रोकथाम कानून, मंदिरों से देवदासी प्रथा खत्म करवाना, वेश्यालय बंद करने और महिलाओं व बच्चों की तस्करी रोकने का कानून। बाल विवाह को रोकने के लिए एवं लड़कियों की सहमति को प्राथमिकता के साथ उनकी उम्र को बढ़ाकर 14 करने वाले विधेयक को परिषद में डॉ. रेड्डी ने प्रस्तुत किया। जिसमें उन्होंने कहा कि बाल विवाह की प्रथा लड़की के जन्म से मृत्यु तक बाल पत्नी, बाल मां और बाल विधवा के रूप में असहनीय पीड़ा देती है। उनकी यह दृष्टि दूरदर्शी थी। नारी उत्थान हेतु उनके द्वारा किये गये प्रयास अभूतपूर्व व उल्लेखनीय है। जब उनका यह विधेयक बाल विवाह रोकथाम कानून स्थानीय प्रेस में प्रकाशित हुआ तो उसका विरोध कई कट्टरपंथियों द्वारा किया गया।

डॉ रेड्डी द्वारा देवदासी प्रथा को समाप्त करने के लिए क्या किए गए प्रयासों एवं उसे कानून बनवाने पर रूढ़िवादी विचारों द्वारा विरोध किया गया जिसके बाद भी मद्रास विधान परिषद ने सर्वसम्मति से समर्थन। अंततः यह विधेयक 1947 में कानून बन गया। जब मद्रास विधान परिषद में प्रस्ताव रख रही थी तो उन्होंने कहा था कि देवदासी प्रथा बहुत खराब है और यह एक प्रकार का धार्मिक अपराध है। उन्होंने देवदासियों के लिए 1931 में अव्वई घर की शुरुआत की जिसका मुख्य उद्देश्य देवदासीयों की सुरक्षा थी। छोटी बहन की कैंसर से मौत ने उन्हें अंदर तक हिला दिया और फिर उन्होंने 1954 में अड्डार कैंसर संस्थान की स्थापना में लग गई। आज भी यह संस्थान पूरे मनोयोग से कैंसर के इलाज में अपना योगदान दे रहा है और पूरे भारत से लगभग हर साल 80000 लोगों का इलाज होता है। डॉ मुथुलक्ष्मी रेड्डी को 1956 में भारत के राष्ट्रपति द्वारा पद्म भूषण सम्मान से सम्मानित किया गया।

सामाजिक कुरीतियों को समाप्त करने के लिए अपने जीवन को समर्पित करने वाली डॉक्टर रेड्डी की मृत्यु 22 जुलाई 1968 को हुई। उनकी स्मृतियों को संजोए हुए तमिलनाडु सरकार ने डॉक्टर रेड्डी के जन्म तिथि पर 1986 में डाक टिकट निकाला एवं गूगल ने उनकी जयंती पर डूडल भी बनाया। ऐसी प्रेरणा स्त्रोत महिला सशक्तिकरण की पर्याय, आत्मविश्वास से परिपूर्ण, डॉ रेड्डी को शत.शत नमन।

(लेखिका एस. डी. पी. जी. कॉलेज, गाजियाबाद असिस्टेंट प्रोफेसर एवं केशव संवाद पत्रिका की कार्यकारी संपादक हैं)

ISSN No. 2581-3528

प्रथम पर्यावरणविद - भारतीय ऋषि मुनि

डॉ. चारु कालरा

आज संपूर्ण विश्व संयुक्त राष्ट्र द्वारा 'विश्व पर्यावरण दिवस 5 जून 2022' पर दिए गए 'ओनली वन अर्थ' अर्थात् 'केवल एक धरती' के नारे से पर्यावरण संरक्षण हेतु प्रेरणा ले रहा है। हम भारतीय भूमि को मां मान चिर पुरातन समय से उस भाव से अभिभूत हैं। अथर्ववेद में कहा गया है कि 'माता भूमि':, पुत्रो अहं पृथिव्याः। अर्थात् भूमि मेरी माता है और मैं उसका पुत्र हूं। यजुर्वेद में भी कहा गया है– नमो मात्रे पृथिव्ये, नमो मात्रे पृथिव्याः। अर्थात् माता पृथ्वी (मातृभूमि) को नमस्कार है, मातृभूमि को नमस्कार है। अन्य शब्दों में कहा जाए तो वह विचार जो वर्तमान परिस्थितियों में विश्व को प्रासांगिक लग रहा है पुण्य भूमि भारत के ऋषि मुनि उसके प्रणेता हैं। धरती माता जो हमारे जीवन को संचालित करती है, हमारे जीवन के अस्तित्व का एक प्रमुख आधार है वही हमारा पोषण करती है। माँ कहते ही कृतज्ञता और स्नेह रुपी कलियाँ प्रस्फुटित हो उठती हैं और स्वतः ही, 'मेरे किसी भी कर्म से माँ (पर्यावरण/प्रकृति) को कष्ट न हो का भाव जागृत होता है'।

पर्यावरण, अर्थात् परि + आवरण, उन संपूर्ण शक्तियों, परिस्थितियों एवं वस्तुओं का समावेश है, जो प्रत्यक्षतः एवं अप्रत्यक्षतः, जीव जंतुओं को भौतिक एवं जैविक परिस्थितियों से प्रभावित करते रहते हैं, तथा प्रत्येक जीव को आवृत किये हुए रहते हैं। हमारे चारों ओर जो विराट प्राकृतिक परिवेश व्याप्त है, उसे ही हम पर्यावरण कहते हैं। यह प्राकृतिक तत्व हमारी भौतिक, जैविक एवं सांस्कृतिक चेतना को प्रवाहित एवं प्रभावित करते हैं। स्थलीय, जलीय, मृदा, खनिज आदि भौतिक, पौधे, जन्तु, सूक्ष्मजीव एवं मानव आदि जैविक एवं आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक आदि सांस्कृतिक तत्वों की परस्परावलंबी संबंधो से ही समग्र पर्यावरण की रचना और परिवर्तनशीलता निर्धारित होती है।

भारतीय दर्शन के अनुसार सृष्टि का प्रत्येक पदार्थ का मूल प्रकृति के पंचतत्वों – आकाश, वायु, अग्नि, जल तथा पृथ्वी में निहित है। ऋषि मुनियों ने वेदों व विभिन्न उपनिषदों, ग्रंथों आदि द्वारा इन पंचमहाभूतों को ही दैवीय शक्ति के रूप में स्वीकार किया गया है। प्रत्येक घातक अर्थात् भूलोक से लेकर व्यक्ति तक, समस्त परिवेश के लिए शांति की कामना यजुर्वेद के 'शांति मंत्र (36. 17)' से प्राप्त होती है।

भारतीय ऋषियों ने मानव–मस्तिष्क को सही दिशा देने हेतु वेद–संहिता, ब्राह्मण, आरण्यक उपनिषद्, पुराण, प्रभृति उत्कृष्ट ग्रंथों की रचना की और मानव–समुदाय समष्टिगत चिंतन की प्रेरणा दी। यह न केवल तत्कालीन ऋषियों की सामाजिक और पर्यावरणीय सद्भावना का द्योतक है अपितु मानव – जाति को सचेष्ट करने के प्रति उनके उत्तरदायित्व को भी परिलक्षित करता है।

पर्यावरण के जैविक व अजैविक घटकों के परस्पर संबंधों पर ध्यान आकृष्ट करते हुए और पर्यावरण संतुलन में वृक्षों की महत्वपूर्ण भूमिका को स्वीकार करते हुए तत्कालीन मुनियों ने संवेदशीलतायुक्त बृहत् चिंतन किया है। ऋषि वेद व्यास जी मत्स्यपुराण (154.511–512) में उनके महत्व को स्वीकार करते हुए कहते हैं कि दस कुओं के बराबर एक बावड़ी होती है, दस बावड़ियों के बराबर एक तालाब, दस तालाबों के बराबर एक पुत्र है और दस पुत्रों के बराबर एक वृक्ष होता है–

ISSN No. 2581-3528

दशकूपसमावापी दशवापी समो ह्रदः।
दशह्रदसमः पुत्रो दशपुत्रसमो द्रुमः।।

अथर्ववेद जिसकी रचना अंगिरा ऋषि द्वारा 7000 ईसा पूर्व से 1500 पूर्व तक हुई के बारहवें काण्ड का प्रथम सूक्त पृथ्वी सूक्त है जिसके कुल 63 मन्त्र हैं। पृथ्वी सूक्त के मन्त्रदृष्टा ऋषि अथर्वा हैं। इस सूक्त को भूमि सूक्त तथा मातृ सूक्त भी कहा जाता है। इस सूक्त में ऋषि पृथ्वी को माँ समान मान कर उसके आदिभौतिक और आदिदैविक दोनों रूपों का स्तवन कर चहुँ और सुख और वैभव देने की प्रार्थना करते हैं। ऋषि अथर्वा की दूरदृष्टि चर–अचर जगत के परस्पर सामंजस्य पर प्रकाश डालती है।

विभिन्न काव्यों ग्रंथों, उपनिषदों में ऋषि मुनियों का प्रकृति प्रेम झलकता है। वेद सृष्टि विज्ञान के मुख्य ग्रन्थ हैं। सृष्टि के भौतिक व जीवनदायी तत्वों की विशेषताओं का सूक्ष्म और विस्तृत विवरण करते हुए हमारे वेद सम्पूर्ण विश्व को राह दिखाते हैं। जैव–विविधता का संरक्षण वर्तमान पर्यावरणविदों के लिए भी चिंता का विषय है। यजुर्वेद में जैव–विविधता के संरक्षण की दृष्टि से एक महत्त्वपूर्ण ऋचा मिलती है, जिसमें कहा गया है, वे जो नैतिक मर्यादाओं को स्वीकार करने की इच्छा रखते हों, यह वायु उनके लिए सुखकर हो, जल धाराएँ उनके लिए सुखकर हों, यहाँ तक कि ये वनस्पतियाँ नीति परायण जीवन–यापन करने वाले हम सबके लिए सुखकर हो जाएं, रात और भोर भी हमारे लिए सुखकर हो, हे सृष्टिकर्ता! हमारे लिए पृथ्वी और स्वर्ग सुखकर हो जाएं, वन देवता हमारे लिए सुखकर हो जाएं, सूर्य हमारे लिए सुखकर हो जाएं और धेनु हमारे लिए सुखकारी हो जाएं। अन्य शब्दों में कहा जाये तो जीवनदायी तत्वों की शुद्धता संरक्षित हो तो जीवन भी सुरक्षित होगा। पर्यावरण का संतुलन जैव–विविधता के संरक्षण पर निर्भर है।

मधुवाता ऋतायते मधु क्षरन्ति सिन्धवः।
माधवीर्नः सन्त्वोषधीः।।
थरजः।
मधु द्यौरस्तु नः पिता।
मधुमान्नो वनस्पतिमर्धुमां अस्तु सूर्यः।
माध्वीर्गावो भवन्तु नः।।
(यजु.13. 27–27)

उपर्युक्त ऋचा वैदिक ऋषि–मुनियों के प्रकृति स्नेह और उसकी सुरक्षा के लिए उनकी प्रतिबद्धता को स्पष्टतया से पुनःस्थापित करती है।

भारतीय संस्कृति में वृक्ष पूजा, वन संरक्षण का ही उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। घर–घर में नीम, तुलसी का होना, इसी धारणा को पुष्ट करता है। वनस्पतियों के स्वास्थ्यपूर्ण विकास एवं पर्यावरण की सुरक्षा हेतु कई भारतीय प्राचीन ग्रन्थ उपलब्ध हैं। जिसमे लगभग 1000 साल पूर्व, सुरपाल द्वारा रचित संस्कृत ग्रन्थ, 'वृक्षायुर्वेद' भी है जिसमें वृक्षों से सम्बन्धित चिन्तन है। सन् 1996 में डॉ वाय एल नेने (एशियन एग्रो–हिस्ट्री फाउन्डेशन, भारत) ने यूके के बोल्डियन पुस्तकालय (आक्सफोर्ड) से इसकी पाण्डुलिपि प्राप्त की। डॉ नलिनी साधले ने इसका अनुवाद अंग्रेजी में किया। 60 पृष्ठों में 325 परस्पर सुगठित श्लोकों द्वारा अन्य बातों के अलावा 170 पौधों की विशेषताएँ दी गयीं हैं। इसमें बीज खरीदने, उनका संरक्षण, उनका संस्कार (ट्रीटमेन्ट) करने, रोपने के लिये गड्ढा खोदने, भूमि का चुनाव, सींचने की विधियाँ, खाद एवं पोषण, पौधों के रोग, चिकित्सा, आदि का वर्णन है।

इसी प्रकार, वराहमिहिर द्वारा रचित बृहत्संहिता में 'वृक्षायुर्वेद' पर भी एक अध्याय है। ऋषि वराहमिहिर ने 550 ई. के लगभग तीन महत्वपूर्ण पुस्तकें बृहज्जातक, बृहत्संहिता और पंचसिद्धांतिका, लिखीं। जिसमें से बृहत्संहिता में वास्तुविद्या, भवन–निर्माण–कला, वायुमंडल की प्रकृति, वृक्षायुर्वेद आदि विषय सम्मिलित हैं।

महर्षि वशिष्ठ के पौत्र, गोत्रप्रवर्तक, वैदिक सूक्तों के दृष्टा और ग्रंथकार महर्षि पाराशर, एक मन्त्रदृष्टा ऋषि, शास्त्रवेत्ता, ब्रह्मज्ञानी एवं स्मृतिकार थे। इनके द्वारा रचित, 'कृषि पाराशर' संस्कृत भाषा में निबद्ध कृषि का सर्वाधिक चर्चित ग्रन्थ है। इसमें अन्न, धरती, और कृषि कर्म की महत्ता को दर्शाया गया है।

अनेक उपनिषदों में अग्नि, जल, वायु, आकाश आदि को देव स्वरुप माना गया है। इससे यह स्पष्ट होता है कि तत्कालीन ऋषियों को न केवल पर्यावरण की महत्ता का ज्ञान था, बल्कि वे इसके संरक्षण को भी प्रश्रय देते थे। मनुस्मृति में भी कहा गया है कि वृक्ष भी मानव की भांति चेतन होते हैं तथा वे भी सुख–दुख का अनुभव करते हैं। पराधीन भारत में सर जगदीश चन्द्र बोस के प्रयोगों ने यह सिद्ध किया और विश्व के वैज्ञानिकों ने इसे स्वीकारा भी।

प्राचीन भारतीय चिंतन परम्परा में जल प्रबन्धन और स्वास्थ्य का सूत्र भी स्पष्ट दिखता है। मनुस्मृति (4.56) के अनुसार–

नाप्सु मत्रूं पुरीषं या
स्टोवनं समुत्सृजेते।
अमेध्यलिप्तमन्यद्वा
लोहितं वा विषाणि वा।

अर्थात् पानी में मलमूत्र, थूक अथवा अन्य दूषित पदार्थ रक्त या विष का विसर्जन न करें। ऐसे अनेक उदाहरणों से वैदिक ऋषियों का स्वस्थ सृष्टि के लिए स्वच्छ जल की उपलब्धता के लिए चिंतन मुखरित होता है।

वैदिक काल में वायुमण्डल को प्रदूषण मुक्त रखने के लिए यज्ञ अथवा अग्निहोत्र जैसे कर्मकाण्ड की चर्चा मिलती है, जो नित्य दिनचर्या में सम्मिलित था। सर्वे भवन्तु सुखिनः का भाव जो लोगाक्ष्य स्मृति में वर्णित है, जैवविविधता के संरक्षण में संपोषी विकास की दृष्टि से मील का पत्थर माना जा सकता है। इसमें कोई दोराय नहीं कि वैदिक चिंतन की उद्गमस्थली प्रकृति ही है। आज जबकि विकास के नाम पर धरती की प्रसवधर्मिता ही दांव पर लग गई है और पर्यावरण के हर घटक के अस्तित्व पर संकट के बादल मंडरा रहे हैं, वेदों से ही हमारा उचित मार्ग दर्शन होगा।

सुविधाओं की चाहत में स्वयं ही पर्यावरण को विषाक्त बनाता मानव वेदों से ही उचित मार्गदर्शन प्राप्त कर सकता है। सृष्टि में विद्यमान प्रत्येक जड़–चेतन वस्तु में आत्मिक सहचर्य है और प्रकृति केवल उपभोग मात्र के लिए नहीं हैं अपितु उसका माँ की भांति ध्यान रखना हमें नित नए–नए पर्यावरणीय संकटों से बचाएगा। आवश्यकता है पुनः ऋषि मुनियों की रचनाओं से प्रेरणा लेने की, और इस भाव को स्थापित करने की कि ज़रुरत और लोभ में अंतर होता है। जिस प्रकार निःस्वार्थ भाव से पर्यावरण का हर घटक अपनी भूमिका का निर्वहन कर रहा है मानव को भी कृतज्ञ हो अपनी भूमिका पर 'मैं' से ऊपर उठ कर समष्टिगत दृष्टि से विचार करना होगा। अंत में यह स्मरण रखना होगा कि हर पर्यावरण सम्बन्धी मुश्किल का निदान हमारे प्रथम पर्यावरणविद–भारतीय ऋषि मुनियों के ज्ञान की अविरल और निर्मल धारा में गोता लगाने से ही मिलेगा न कि उपभोगवादी पाश्चात्य सभ्यता से।

(लेखिका असिस्टेंट प्रोफेसर, वनस्पति विज्ञान विभाग दीन दयाल उपाध्याय महाविद्यालय दिल्ली विश्वविद्यालय एवं राष्ट्र सेविका समिति दिल्ली प्रान्त की पर्यावरण गतिविधि प्रमुख हैं)

ISSN No. 2581-3528

साक्षात्कार

'स्वाभिमान की भाषा हिन्दी'

हिन्दी अपने आप में समर्थ विश्व में सर्वाधिक बोली जाने वाली भाषाओं में से एक है। भाषा के रूप में हिन्दी प्रकृति से ही उदार ग्रहणशील, सहिष्णु और भारत की राष्ट्रीय चेतना की संवाहिका है। कभी नहीं टूटने वाले जुड़ाव के बंधन में बांधने वाली भाषा अगर कोई है तो वो हिन्दी है। जहां वर्ण अंग्रेजी से दुगने हैं और भाव असीमित। हिन्दी हमारी मनमोहिनी, भाषा है। आजादी के बाद और देश में भारत के संविधान के लागू होने के कुछ महीने पहले, 14 सितंबर 1949 को सर्व सहमति से संविधान सभा में हिन्दी को भारत में राज्य भाषा का दर्जा दिया गया। जिसका मतलब था कि अब भारत के सभी सरकारी काम काज हिन्दी भाषा में किये जायेंगे और इसके साथ ये भी कहा गया कि 15 साल बाद यानि 1965 तक अंग्रेजी के प्रचलन को पूरी तरह से खत्म कर दिया जाएगा। इन 15 सालों में हिन्दी का प्रचार प्रसार होना था ताकि इसकी स्वीकार्यता लोगों में सहजभाव से बढ़े। लेकिन अंग्रेजी का प्रचलन अभी भी दफ्तरों में चल रहा था। हर क्षेत्र में प्रसारित करने के लिये राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा ने प्रस्ताव पारित किया और साल 1953 से संपूर्ण भारत में 14 सितंबर को प्रतिवर्ष 'हिन्दी दिवस' के रूप में मनाया जाने लगा। 1949 में सदन में जब हिन्दी को राष्ट्र भाषा बनाने को लेकर 12, 13, 14 सितंबर 1949 को जब चर्चा चल रही थी तब ये साफ कहा गया कि किसी विदेशी भाषा से कोई राष्ट्र महान् नहीं बन सकता है, कोई भी विदेशी भाषा आम लोगों की भाषा नहीं हो सकती है, हमें एक राष्ट्र का निर्माण करना है, जिसमें आत्मविश्वास हो। भारत को शक्तिशाली राष्ट्र बनाने के लिए हिन्दी को ही राष्ट्रभाषा बनानी चाहिए। लेकिन एक लंबी चौड़ी बहस के बाद भी 14 सितम्बर को भारतीय संविधान के भाग 17 के अध्याय की धारा 343 (1) में वर्णित किया गया कि भारत की राजभाषा हिंदी और लिपि देवनागरी होगी। इसमें डॉ.कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी और गोपाल स्वामी अयंगर की अहम भूमिका रही। संविधान सभा की भाषा विषयक बहस लगभग 278 पृष्ठों में मुद्रित हुई। अब सवाल ये है कि आजाद भारत के संविधान में हिन्दी को राष्ट्रभाषा का दर्जा क्यों नहीं दिया गया ? अपने इन्ही सवालों के साथ हमारी चर्चा वरिष्ठ पत्रकार, लेखक,साहित्यकार और इंदिरा गांधी कला केंद्र के अध्यक्ष रामबहादुर राय जी के साथ हुई चर्चा के कुछ मुख्य बिन्दु निम्न है-

अनीता चौधरी

हमारे देश में 77 फीसदी लोग हिन्दी बोलते हैं, विश्व में सर्वाधिक बोली जाने वाली भाषाओं में हिन्दी चौथे स्थान पर है लेकिन हिन्दी को राष्ट्र भाषा माने जाने को लेकर हमेशा विवाद खड़ा हो जाता है, हिन्दी सुंदर मनमोहक भाषा है लेकिन स्वीकार्यता में कहीं न कहीं मतभेद सा रहता है ?

इसको मतभेद नहीं कहेंगे, उस संविधान सभा का नेतृत्व जवाहर लाल नेहरू कर रहे थे जो हिन्दी को लेकर उतने सकारात्मक नहीं थे और 14 सितंबर 1949 को जो फैसला हुआ वो केएल मुंशी और अयांगर के फॉर्मूले पर हुआ लेकिन कई जानकारों जिसमें सेठ गोविंद दास और रामविलास शर्मा भी हैं उनका कहना है कि संविधान सभा में अगर उसी समय हिन्दी को राष्ट्रभाषा का दर्जा दे दिया जाता तो दक्षिण से विरोध का कोई सवाल ही नहीं रहता। जवाहर लाल नेहरू पूरी तरह से हिन्दी के पक्ष में नहीं थे। स्वयं कॉंग्रेस के अंदर कुछ लोगों के बीच विवाद था, एक तरफ हिन्दी के लोग थे और दूसरी तरफ हिन्दुस्तानी के। कॉंग्रेस हिन्दी और हिन्दुस्तानी के विवाद में उलझी हुई थी। भारत विभाजन के बाद एक जनमत के साथ कॉंग्रेस के अंदर भी, कॉंग्रेस के सदस्यों में भी एक ही राय बनी हुई थी कि हिन्दुस्तानी नहीं हमें संस्कृत से निकली हुई जो आधुनिक हिन्दी उसे ही अपनी राष्ट्रभाषा बनानी चाहिए जिसको लेकर संविधान सभा में वोट भी हुआ और हिन्दी वहाँ जीती भी और इस तरह से हिन्दी को लेकर एक विवाद वहाँ समाप्त हुआ। लेकिन चार नवंबर 1948 में जब संविधान सभा में संविधान का ड्राफ्ट रखा गया तो सेठ गोविंद दास, रघुनाथ विनायक धुलेकर,बालकृष्ण शर्मा नवीन जैसे लोगों ने ये सवाल उठाया कि हम अपना संविधान अंग्रेजी में बना रहे हैं लेकिन हिन्दी में कब बनेगा ? 4 नवम्बर 1948 से लेकर 14 सितंबर 1949 तक सांविधान सभा में हिन्दी का सवाल सबसे ज्यादा चर्चित सवाल रहा और 12, 13, 14 सितंबर 1949 को हिन्दी पर बड़ी बहस हुई और अंततः केएल मुंशी और गोपाल स्वामी अयांगर के फॉर्मूले को ध्यान में रखते हुए हिन्दी को राजभाषा का दर्जा दिया गया। 15 साल बाद अंग्रेजी का प्रचलन खत्म कर दिया जाएगा और इस बीच में हिन्दी का प्रचार–प्रसार और विकास किया जाएगा। ऐसे यहाँ पर ये कहना चाहूँगा कि सांविधान सभा में चर्चा के 100 साल पहले से भी हिन्दी एक विकसित भाषा थी। हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनने को लेकर जो अड़चन थी वो प्रधानमंत्री स्तर पर थी और उस समय प्रधानमंत्री थे पण्डित जवाहर लाल नेहरू। हालांकि अब समय बदल चुका है, अड़चनें दूर हो गई हैं। 2020 के शिक्षा नीति को अगर देखें तो भारत सरकार ने पुराने भ्रम और भूल को दूर किया है। हिन्दी और भारतीय भाषाओं को ज्ञान, विज्ञान और संवाद भाषा के रूप में वरीयता दी गई है। इसलिए इस बार हिन्दी दिवस इस उम्मीद के साथ मनाई जा राही है कि हिन्दी बहुत जल्दी राष्ट्रभाषा के रूप में विराजमान हो जाए। चाहे राष्ट्रपिता महात्मा गांधी हों या कविवर रवींद्र नाथ ठाकुर या सी.राजगोपालाचारी इन लोगों ने हिन्दी राष्ट्रभाषा होनी चाहिए इसको लेकर शुरू से ही जोर दिया था। रवींद्रनाथ ठाकुर ने 1918–19 में ही ये बात कही थी। हमलोगों को ये भी याद रखना चाहिए कि जब 1918 में हिन्दी साहित्य सम्मेलन के महात्मा गांधी जब पहली बार अध्यक्ष बने तो ,सबसे पहला काम किया कि अपने बेटे देवदास गांधी को दक्षिण में हिन्दी के प्रचार के लिए भेजा। सी. राजगोपालचारी के घर पर देवदास गांधी ने रहकर दक्षिण भारत के राज्यों में हिन्दी का प्रचार प्रसार किया। उसी समय हिन्दी प्रचार सभा बनी जो आज एक बड़ी संस्था के रूप में हिन्दी के लिए काम कर रही है। 1936 या 1938 में गांधीजी जब दूसरी बार हिन्दी साहित्य सम्मेलन के अध्यक्ष बने तो उन्होंने महाराष्ट्र, गुजरात, बंगाल में और पूर्वोत्तर के राज्यों में हिन्दी के प्रचार–प्रसार के लिए काम किया। इसलिए स्वाधीनता संग्राम के प्रारम्भिक दिनों में ही 1920 से 1947 तक में हिन्दी बोलचाल, संपर्क की भाषा और लेखन की भाषा रही। स्वाधीनता संग्राम में अग्रणी भाषा के रूप में इसको मान्यता मिली। परंतु पंडित जवाहर लाल नेहरू के मानसिक या दिमागी अड़चन कहे जिसके कारण उसे राष्ट्रभाषा का दर्जा नहीं मिल पाया। संविधान सभा के फैसलों की

ISSN No. 2581-3528

वजह से ही सुप्रीम कोर्ट के फैसले आज भी अंग्रेजी मे आते हैं। लेकिन अब इस व्यवस्था को बदलने की बात चल रही है। उसी तरह से केंद्र के राजकाज की भाषा भी अंग्रेजी है लेकिन ये बड़ा संकेत है कि गृह मंत्री अमित शाह फाइल हिन्दी में चले इसकी कोशिश करते और अपना आधिकारिक हस्ताक्षर भी हिन्दी में करते हैं। प्रधानमंत्री मोदी भी हिन्दी को बढ़ावा देने की बात करते हैं और अन्तर्राष्ट्रीय मंचों पर भी हिन्दी को स्थापित कर रहे हैं। राज्यों के अंदर भी हिन्दी का प्रचलन बढ़े इसकी भी कोशिश की जा रही है साथ ही भारत के सभी राज्यों की अपनी भाषाएं भी विकसित हो यह भी प्रयास किया जा रहा है। 2020 के बाद का जो दौर है वो शिक्षा में क्रांति का दौर है और उसी में हिन्दी का स्थान भी बहुत बड़ा होने वाला है।

संविधान सभा में हिन्दी को लेकर जो कमेटी थी उसमें दक्षिण भारत के लोग भी थे और सबसे पहले हिन्दी को लेकर सकारात्मक बंगाल ही था लेकिन आज यही दोनों राज्य सबसे ज्यादा विरोध कर रहे हैं। ये आजादी के बाद से ही चली आ रही महत्वाकांक्षी राजनीति का हिस्सा है या जवाहरलाल नेहरू के अंग्रेजी मानसिकता और प्रॉपगंडा का नतीजा ?

जब 15 साल बीता तो लोगों ने संविधान सभा में उस समय के प्रधनमंत्री लाल बहादुर शास्त्री को याद दिलवाया कि 15 साल हो गए हैं अब अंग्रेजी को विदा कर देना चाहिए। इस मांग के साथ ही उत्तर भारत में "हिन्दी आंदोलन" के रूप में एक आंदोलन हुआ। प्रतिक्रिया में दक्षिण में भी एक आंदोलन हुआ जिसका नेतृत्व द्रमुक कर रही थे। लेकिन दक्षिण की प्रतिक्रिया अब काफी क्षीण हो गई है अब दक्षिण के सिनेमा कलाकार भी अपनी फिल्मों को हिन्दी भाषी क्षेत्रों के लिए हिन्दी डबिंग के साथ लाते हैं। आज कोई दक्षिण में जाए और हिन्दी बोले तो उसे संवाद करने में कोई कठनाई नहीं होती है। ये एक राजनीतिक मुद्दा है जिसे हमेशा भावनात्मक बनाने की कोशिश की जाती है। नई पीढ़ी में ऐसी धारणा है कि अंग्रेजी जानने से नौकरी आसानी से मिल जाती है इस सोच को अब और हवा दे रहे हैं दिल्ली के मुख्यमंत्री अरविन्द केजरीवाल। ये गुलामी और आत्मविश्वासहीनता की मानसिकता का परिचायक है। इस अवधारणा को तोड़ने की जरूरत है, साथ ही स्थानीय भाषा को भी उतनी ही वरीयता देनी चाहिए। हिन्दी के लिए अब बंगाल और दक्षिण में भी वो विरोध नहीं है ये बात नई पीढ़ी को भी समझाने की जरूरत है। अंग्रेजी सबसे लोकप्रिय भाषा है ये भ्रम भी धीरे धीरे टूटता जा रहा है। यूरोप के कई देशों में भी अंग्रेजी का विरोध हो रहा है और अपनी भाषा की मांग बढ़ रही है। अंग्रेजी एक साम्राज्य की भाषा थी, वो साम्राज्य ध्वस्त हो चुका है और अब ब्रिटेन तक सीमित रह गया है। भाषा सीखने मे कोई अड़चन नहीं है लेकिन हिन्दी मेरी मातृभाषा है ये गर्व का विषय भी होना चाहिए और गौरव का भी। भारतेन्दु हरिश्चंद्र के वाक्य' "निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल, बिन निज भाषा ज्ञान के, मिटन न हिय के सूल" ये वाक्य आधुनिक हिन्दी का बोध करवाता है। हिन्दी की भाषायी चेतना आत्म मुग्धता की नहीं है, ये सांस्कृतिक और बौद्धिक आत्मलोकन के भाव से प्रेरित रही है। यही हिन्दी की ताकत हैं। भारतेन्दु हरिश्चंद्र के बलिया के भाषण को याद कीजिए, 1884 की बात है कार्तिक पूर्णिमा का दिन था, भारतेन्दु ने उस ददरी के मेले में जो भाषण दिया था जिसका शीर्षक था "भारत कि उन्नति कैसे हो सकती है" और महत्वपूर्ण बात ये है कि भारतेन्दु के उस कार्यक्रम की अध्यक्षता एक अंग्रेज कलेक्टर डी. टी रॉबर्ट कर रहा था जो मंच पर बैठा था। यानि भारतेन्दु ये बात

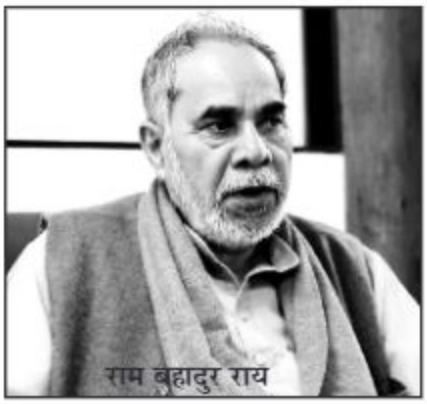
राम बहादुर राय

अंग्रेज कलेक्टर के सामने कर रहे थे। उनका वह भाषण आज 2022 में भी उतना ही प्रासंगिक है। वह भाषण हमारे लिए ऊर्जा का स्रोत है। उसके कुछ अंश इस प्रकार हैं "भाइयों अब तो नींद से जागो अपने देश की सब प्रकार की उन्नति करो, जिसमें तुम्हारी भलाई हो वैसी ही किताबें पढ़ो, वैसे ही खेल खेलों, वैसे ही बातें करो, परदेसी वस्त्र और परदेसी भाषा में विश्वास मत रखो, अपने देश में अपनी भाषा में उन्नति करो।"

एक और प्रसंग 1992 का है भरातीय साहित्य परिषद का अधिवेशन हैदराबाद में था, उद्घाटन सत्र में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के पांचवें सरसंघचालक जो उस समय सह सरकार्यवाह के पद पर थे। केसी सुदर्शन जी जिनका पूरा नाम कोपहल्ली सीतारमैया सुदर्शन था उन्होंने भी अपने भाषण में हिन्दी की महत्वता बताई थी। दक्षिण भारत के होते हुए भी उन्होंने हिन्दी के लिए बहुत काम किया था।

किसी भी चीज के प्रसार प्रचार के लिए सबसे महत्वपूर्ण कड़ी होती है पत्रकारिता और पत्रकार लेकिन हिन्दी पत्रकारिता हमेशा उपेक्षित रही, एक पत्रकार होने के नाते इस पर आप क्या कहना चाहेंगे?

1947 में देश आजाद हुआ तो एक भाषायी जागरण हुआ हिन्दी पट्टी की ही अगर बात करें तो जो राज्य 1956 में बने हैं उन्होंने भी हिन्दी में अखबार शुरू किए जो भारत के स्वर्णिम विकास में अपनी सहभागिता निभाने के ध्येय से आए थे। इन सब के बीच हिन्दी और अंग्रेजी का संघर्ष भी चलता रहा। धीरे–धीरे राजनीति में जीत के लिए भाषायी पत्रकारिता का महत्व बढ़ गया और ऐसा लगा कि हिन्दी ने अंग्रेजी को पछाड़ दिया है। 1989 से 1990 तक का ये समय हिन्दी पत्रकारिता का सबसे स्वर्णिम समय था। जनमत बनाने में हिन्दी पत्रकारिता अपनी भूमिका खूब निभा रही थी। लेकिन 1991 में पी.वी. नरसिंहम्मा राव ने अपने उदारीकरण नीति के माध्यम से अर्थव्यवस्था को कैंसर की दवा दे दी और उसी दौर में हिन्दी पत्रकारिता का जो परचम लहरा रहा था उस पर भी इसका बहुत बुरा असर पड़ा। 1991 से लेकर 2020 तक पत्रकारिता के क्षेत्र में फिर एक बार अंग्रेजी का वर्चस्व वैसे ही बढ़ गया जो 1947 की आजादी से पहले था। पब्लिक स्कूल शुरू हुए अंग्रेजी में अवसर के नाम पर हिन्दी को खत्म करने की कोशिश चलती रही लेकिन ऐसा लग रहा है कि अब फिर से हिन्दी पत्रकारिता अपनी महत्वपूर्ण भूमिका में आ रहा है।

कहते है देश शरीर होता है तो उसकी राष्ट्रभाषा आत्मा होती और दूसरे देशों में उसकी राष्ट्रभाषा से उसकी पहचान बनती है। कब वो समय आएगा जब भारत अपने शरीर और आत्मा दोनों के साथ विदेश भ्रमण पर जाएगा।

जल्दी ही वो दौर आएगा, भाषा जब फैलती है तो उसके पीछे उस देश का समृद्ध समाज उसको संभाल रहा होता है। एक गरीब देश अपने भाषा की लड़ाई भी दमदार तरीके से नहीं लड़ पाता है। 2014 के बाद से देखें तो भारत का वर्चस्व विदेशों में लगातार बढ़ रहा है। हमारे देश के प्रधानमंत्री विदेशों में भारतीय संस्कृति को बढ़ावा दे रहे हैं और वो वहाँ बात भी हिन्दी में करते हैं। प्रधानमंत्री का विदेशी पटल पर हिन्दीभाषी होना लोगों के लिए प्रेरणा है। ये प्रेरणा न सिर्फ भारत के लिए बल्कि प्रवासी भारतीयों के लिए भी है। भारतीय राजदूतों को भी जिस देश में भी वो रहते हैं उनको वहाँ हिन्दी को भाषा के रूप में अपनाना चाहिए। एस जयशंकर हों या सुषमा स्वराज वो विदेशों में भी हिन्दी की भाषायी गरिमा को पटल पर हमेशा रखें है और ये बदलाव बहुत बड़ी उम्मीद है।

ISSN No. 2581-3528

प्राचीन ज्ञानपीठ वल्लभी विश्वविद्यालय

प्रो. (डॉ.) हरेन्द्र सिंह

हमारी संस्कृति और उसकी विरासत को अक्षुण्ण रखकर पीढ़ी–दर–पीढ़ी आगे बढ़ाने तथा इसका संरक्षण करने का कार्य शिक्षा के माध्यम से प्राचीन काल से ही होता आ रहा है और हमारे शिक्षा के केन्द्र इस कार्य में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते आ रहे है, जिसके कारण भारत अपनी समृद्ध शैक्षिक विरासत के लिए दुनिया भर में विख्यात है। पुरातन काल में हमारी ज्ञान परम्पराएँ और शिक्षा इतनी श्रेष्ठ रही हैं कि दुनिया भर से अध्ययन करने के लिए विद्यार्थी भारत आते थे और इसीलिए भारत को विश्वगुरु कहा जाता था।

सम्पूर्ण विश्व में शिक्षा व्यवस्था के पाश्चात्य एवं यूरोपीय विश्वविद्यालयों के अस्तित्व में आने से पूर्व ही भारत में पहले से ही ज्ञान के परिमार्जन हेतु बहुविषयक शिक्षा के केन्द्र थे, जिन्होंने सम्पूर्ण विश्व को ज्ञान के प्रकाश से आलोकित किया। ऐसे प्रमाण हैं कि 6वीं ई. पू. से भारत में उन्नत शिक्षा के 80 से भी अधिक पारम्परिक केन्द्र थे।

ऐसे ही हमारी एक शैक्षिक विरासत वल्लभी विश्वविद्यालय की स्थापना तब हुई जब गुप्त काल का विखंडन हो रहा था। यह वल्लभी विश्वविद्यालय सौराष्ट्र (वर्तमान गुजरात) में स्थित था, माना जाता है कि इसकी स्थापना 470–480 ई. के मध्य में गुप्त वंश के एक गुर्जर सेनापति भट्टारक ने की थी जो कि मैत्रक वंश का संस्थापक था। वर्तमान समय में मैत्रक गुर्जरों को उनके गोत्र बटार से जाना जाता है। गुर्जर सेनापति भट्टारक गुप्त साम्राज्य के अधीन तत्कालीन सौराष्ट्र उपखण्ड का राज्यपाल था और वल्लभी उसकी राजधानी थी।

प्राचीन काल में वल्लभी गुजरात के प्रायद्वीप भाग में स्थित था, जो अब लुप्त हो चुका है। वर्तमान समय में इसे वला नामक भूतपूर्व रियासत के रूप में जाना जाता है तथा मुख्य स्थान वल्लभी के नाम से सुरक्षित रह गया है, वल नामक गांव से इसकी पहचान की गई है, जहां मैत्रकों के तांबे के अभिलेख और मुद्राएं पाई गई हैं। यहाँ की प्रसिद्धि का कारण वल्लभी विश्वविद्यालय था जो तक्षशिला तथा नालन्दा की परम्परा में था। कश्मीरी विद्वान् पंडित सोमदेव के कथासरित्सागर और मैत्रक काल के ताम्रपत्रों में वल्लभी को 'सीखने का घर और अंतर्राष्ट्रीय व्यापार बंदरगाह' के रूप में उल्लेख किया गया है। वल्लभी विश्वविद्यालय में बौद्ध, जैन आदि धर्म की शिक्षा दी जाती थी। वल्लभी विश्वविद्यालय दरअसल बौद्ध धर्म की शाखा हीनयान का स्कूल थी, जिसकी अकादमिक उत्कृष्टता विश्व प्रसिद्ध नालंदा विश्वविद्यालय के बराबर थी। यहां प्रसिद्ध विद्वानों के नाम दरवाजे पर लिखे जाते थे तथा यहाँ के विद्वान राजसभा में अपना ज्ञान दिखाकर राजतंत्र में ऊंचे अधिकार प्राप्त करते थे।

यह बात विशेष ध्यान देने योग्य है कि मैत्रक वंश के राजा बौद्ध नहीं थे बल्कि सनातनी गुर्जर होने के साथ–साथ सूर्य उपासक थे परन्तु फिर भी वे इस संस्था के संस्थापक थे तथा वल्लभी विश्वविद्यालय की उदारतापूर्वक सहायता करते थे। चीनी यात्री इत्सिंग ने अपने वर्णन में लिखा है कि वल्लभी पूर्वी भारत के प्रसिद्ध शिक्षा संस्थान नालंदा से स्पर्धा करती थी। वल्लभी विश्वविद्यालय सातवीं शताब्दी में गुनामति और स्थिरमति नाम की विद्याओं का सबसे मुख्य केंद्र था तथा इसमें धर्म निरपेक्ष विषयों की शिक्षा दी जाती थी, यही कारण था कि वल्लभी विश्वविद्यालय में पढ़ने के लिए पूरी दुनिया से विद्यार्थी आते थे।

माना जाता है कि वल्लभी विश्वविद्यालय की प्रसिद्धि 600 ईस्वी से 1200 ईस्वी तक रही, जो गुजरात के तटों तक ही सीमित न रहकर दूर–दूर तक फैली हुई थी। यह प्रसिद्ध विश्वविद्यालय ज्ञान की आराधना तथा विशिष्ट प्रकार की शिक्षा प्रणाली के कारण भारत में ही नहीं बल्कि तत्कालीन विश्व में प्रसिद्ध था। इस विश्वविद्यालय में देश–विदेश से अध्ययन करने के लिए विद्यार्थी आते थे। सही अर्थों में यह अंतरराष्ट्रीय विश्वविद्यालय था जिसमें लगभग प्रत्येक विद्या शाखाओं से संबंधित शिक्षा दी जाती थी।

भारतीय विद्या कला और ज्ञान विज्ञान की शिक्षा देने वाला यह विश्वविख्यात विश्वविद्यालय बौद्ध धर्म के हीनयान स्कूल का केंद्र होने के बावजूद भी वल्लभी विश्वविद्यालय वैदिक प्रथाओं और ब्राह्मणवाद के बारे में ज्ञान प्रदान करता था और यही इसका एक रोचक पहलू भी है। ऐसा कहा जाता है कि उत्तर भारत में गंगा के तट से युवा ब्राह्मण छात्र वैदिक प्रथाओं और अनुष्ठानों का अध्ययन करने के लिए वल्लभी की यात्रा किया करते थे। प्रसिद्ध कवि सोमदेव की रचना कथासरितसागर में वल्लभी विश्वविधालय के नाम और प्रसिद्धि का वर्णन है। कहा जाता है कि जब ब्राह्मण बच्चों के लिए सीखने और ज्ञान को आत्मसात करने का समय होता था, तब उन्होंने अक्सर नालंदा या बनारस के बजाय वल्लभी को चुना।

वल्लभी विश्वविद्यालय में शिक्षा का माध्यम प्राकृत और संस्कृत भाषा थी, यहाँ पर धर्मशास्त्र के अलावा, वेदांग, इतिहास, दर्शन, ज्योतिष, भूगोल, कला, अध्यात्म, अंकगणित, धातु विज्ञान, नैतिकता, व्रत, चिकित्सा आदि की शिक्षा तो दी ही जाती थी, साथ ही साथ राजनीति विज्ञान, खेती और व्यापर, लोक प्रशासन, कानून व्यवस्था, वास्तुकला विज्ञान, तत्वमीमांसा, तर्क–वितर्क, अर्थशास्त्र आदि अन्य क्षेत्रों में अपनी शिक्षाओं के लिए भी वल्लभी विश्वविद्यालय की अपनी अलग प्रसिद्धि थी। यहाँ की शिक्षण पद्धति में शिक्षण और व्यावसायिक शिक्षा को विशेष महत्व दिया जाता था। शिक्षण को प्राथमिक शिक्षा के लिए तथा व्यावसायिक शिक्षा को उच्च शिक्षा के लिए उपयोग किया जाता था। प्रसिद्ध इतिहासकार अल्तेकर महोदय ने भी अपने अध्ययन में वल्लभी विश्वविधालय को 'देव संस्कृति का कीर्ति स्तम्भ' कहा है।

वल्लभी विश्वविद्यालय की प्रसिद्धि एवं समृद्धता नालंदा विश्वविद्यालय के ही सामान थी। यहाँ सातवीं शताब्दी के मध्य काल में चीनी यात्री 'ह्वेनसांग' और अंत में 'इत्सिंग'

ISSN No. 2581-3528

आये थे, जिन्होंने वल्लभी विश्वविद्यालय की तुलना बिहार के नालंदा विश्वविधालय से की थी। सातवीं शताब्दी के मध्य में चीनी यात्री ह्वेनसांग तथा अंत में इत्सिंग वल्लभी आये थे।

इत्सिंग ने अपना प्रसिद्ध ग्रन्थ 'भारत तथा मलय द्वीपपुंज में प्रचलित बौद्ध धर्म का विवरण' लिखा। इस ग्रन्थ में चीनी यात्री इत्सिंग के विवरण के अनुसार, सभी देशों के विद्वान इस विश्वविद्यालय में एकत्रित होते थे, विद्वानों की इस सभा में विविध सिद्धांतों पर शास्त्रार्थ किया जाता था और उनकी सत्यता को निर्धारित किया जाता था। इत्सिंग के अनुसार वल्लभी विश्वविद्यालय की पहचान अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर थी। यहाँ विदेशों से भी छात्र अध्ययन के लिए आते थे। यहाँ एक विशाल पुस्तकालय था। जिसका अनुरक्षण राजकोष से किया जाता था। राजा गणेश के अभिलेखो से भी इसकी पुष्टि होती है।

ह्वेनसांग के विवरण के अनुसार, वल्लभी विश्वविद्यालय में एक सौ बौद्ध विहार थे। इन विहारों में लगभग 6000 हीनयान बौद्ध शाखा के भिक्षु रहते थे जिनके आवास बने हुए थे। चीनी यात्री ह्वेनसंग ने अपने यात्रा वृतांत में बताया है कि यहां के कला संस्थान और विहार शिक्षा के प्रसिद्ध केंद्र थे। कला संस्थानों ने उपयोगी कला, सैन्य प्रशिक्षण, बौद्धिक और वैज्ञानिक शिक्षण के साथ प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा प्रदान की जा रही थी। विद्वान भिक्षु विहारों में निवास करते थे और ज्ञान प्रदान करते थे। उल्लेख मिलता है कि नालंदा विश्वविद्यालय में पढ़ने वाले वसुबंधु के शिष्य स्थिरमती और गुणमती तथा कदंब वंश के संस्थापक मयूरशर्मा (340–70) यहां पढ़ाने आए और विहार में रहे। ऐसे भी प्रमाण है कि महात्मा बुद्ध ने भी वल्लभी विश्वविद्यालय का भ्रमण किया था।

आधुनिक विश्वविद्यालयों की तरह ही वल्लभी विश्वविद्यालय में भी प्रवेश परीक्षा के माध्यम से विद्यार्थियों का प्रवेश होता था। प्रवेश परीक्षा में अनुत्तीर्ण हो जाने पर छात्र को विश्वविद्यालय के प्रवेश द्वार से ही वापस लौटना पड़ता था और उसे वल्लभी विश्वविद्यालय में प्रवेश भी नहीं करने दिया जाता था। वल्लभी विश्वविद्यालय में प्रवेश करते ही प्रत्येक छात्र को निर्धारित वेशभूषा धारण करती पड़ती थी, चाहे उनकी सामाजिक स्थिति कुछ भी हो। प्राथमिक स्तर को निस्या के रूप में जाना जाता था, जो 10 वर्षों की

अवधि के लिए था, और प्रत्येक छात्र को अपने मार्गदर्शक के रूप में एक बौद्ध भिक्षु चुनने की अनुमति थी। फिर छात्र को स्थवीर के रूप में पदोन्नत किया जाता था, जहां वह इससे आगे बढ़ने के लिए एक विषय चुनता था और महारत हासिल कर उपाध्याय कहलाता था। इसके बाद आने वाले नए छात्रों को ज्ञान प्रदान करने के लिए उन्हें विश्वविद्यालय से जोड़ा दिया जाता था।

अधिकांश पाठ्यक्रमों या विषयों की अवधि लगभग 10 वर्षों तक चलती थी और प्रत्येक पांच छात्रों पर एक पंडित या शिक्षक होते थे। इस विश्वविद्यालय की एक और विशेषता सभी को समान मानने का दर्शन था। यानी एक राजा और एक गरीब आदमी का बेटा बिना किसी शुल्क के एक ही कक्षा में साथ बैठकर पढ़ता था।

वर्तमान विश्वविद्यालयों के कैंपस प्लेसमेंट की तरह ही वल्लभी विश्वविद्यालय के छात्र भी अपनी शिक्षा पूरी करने के बाद उन सभी राजाओं और राज्यों के प्रशासन में शामिल हो जाते थे, जो विभिन्न रूपों में विश्वविद्यालय का समर्थन किया करते थे। चीनी यात्रियों के यात्रा वृतांत में उल्लेख है कि विहार में अपनी पढ़ाई पूरी करने के बाद, छात्रों ने धर्मशास्त्र और दर्शन पर चर्चा करके और फिर शाही दरबार में एक अधिकारी के रूप में नौकरी पाने की कोशिश करके अपनी योग्यता साबित करते थे।

वल्लभी विश्वविद्यालय में अमीर और गरीब के बीच कोई अंतर नहीं किया जाता था। सभी को समान अवसर मिलता था। छात्रों का जीवन सादा, उच्च विचार और शांतिप्रिय व अनुशासनप्रिय होता था, उन्हें आचरण के सामान्य नियमों का पालन करना पड़ता था। वल्लभी विश्वविद्यालय में पुस्तकालय भी उपलब्ध था। पुस्तकें राजा गुहसेन प्रथम द्वारा दिए गए अनुदान से खरीदी गई थीं।

वल्लभी विश्वविद्यालय की प्रसिद्धी 475 ई० से 1200 ई० तक रही। अरबों द्वारा मैत्रक वंश पर आक्रमण के बाद वल्लभी विश्वविद्यालय का पतन होने लगा। धीरे–धीरे समय बीतने के साथ–साथ वल्लभी विश्वविद्यालय की चमक और प्रासंगिकता खोती चली गई। 12वीं शताब्दी के अंत में जब मुसलमानों के आक्रमण होने लगे तब अन्य विश्वविद्यालयों की तरह ही वल्लभी विश्वविद्यालय भी नष्ट होकर इतिहास के पन्नों में ही रह गया।

वर्ष 2017 में वडोदरा में आयोजित दूसरे अंतर्राष्ट्रीय बौद्ध सम्मेलन में वल्लभी विश्वविद्यालय को पुनर्जीवित करने की अपील की गई थी और संघकाया नामक संगठन की ओर से इस सम्बन्ध में एक प्रस्ताव केंद्र सरकार को भेजा गया था, जिसे केंद्रीय संस्कृति मंत्रालय ने मंजूरी दे दी है। हमें अपनी प्राचीन समृद्धशाली शैक्षिक विरासतों की अध्ययन प्रणाली एवं ज्ञान विज्ञान तथा विद्याओं का अध्ययन एवं अनुसन्धान की आज महती आवश्यकता है।

(लेखक सरकार द्वारा 'शिक्षकश्री' विभूषित ख्याति प्राप्त शिक्षाविद, शैक्षिक प्रशासक, प्रोफेसर एवं राष्ट्रवादी चिन्तक हैं।)

ISSN No. 2581-3528

शिक्षक दिवस पर विशेष

राम कुमार शर्मा

विश्व के कुछ देशों में शिक्षकों (गुरुओं) को विशेष सम्मान देने हेतु शिक्षक दिवस का आयोजन किया जाता है। प्रत्येक विद्यालय में शिक्षक दिवस मनाया जाता है और शिक्षकों को सम्मानित किया जाता है। भारत के भूतपूर्व राष्ट्रपति डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन का जन्मदिन (5 सितम्बर) को भारत में शिक्षक दिवस के रूप में मनाया जाता है। उन्होंने अपने छात्रों से जन्मदिन को शिक्षक दिवस के रूप में मनाने की इच्छा जताई थी। दुनिया के 100 से अधिक देशों में अलग–अलग तारीख पर शिक्षक दिवस मनाया जाता है।

देश के पहले उपराष्ट्रपति डॉ. राधाकृष्णन का जन्म 5 सितम्बर 1888 को तमिलनाडु के तिरूमनी गांव में एक ब्राह्मण परिवार में हुआ था। वे बचपन से ही किताबें पढ़ने के शौकीन थे और स्वामी विवेकानन्द से काफी प्रभावित थे। राधाकृष्णन जी का निधन चेन्नई में 17 अप्रैल 1975 को हुआ। वे भारतीय संस्कृति के संवाहक, प्रख्यात शिक्षाविद, महान दार्शनिक और एक आस्थावान हिन्दू विचारक थे।

शिक्षक हमेशा हमें गाइड करते हैं, प्रेरणा देते हैं और समाज में हमें एक अच्छा नागरिक बनाते हैं। शिक्षक हमारे जीवन की नींव होते हैं। कहा जाता है कि किसी भी बच्चे के लिए सबसे पहले स्थान पर उसके माता–पिता और फिर दूसरे स्थान पर शिक्षक होता है। 1962 में जब राधाकृष्णन ने भारत के राष्ट्रपति का पद ग्रहण किया तब उनके छात्र व मित्र उनके पास पहुंचे और उनसे अनुरोध किया कि वे उन्हें अपना जन्मदिन मनाने की अनुमति दें। उन्होंने उत्तर दिया कि मेरे जन्म दिन को अलग से मनाने के बजाय इस 5 सितम्बर को शिक्षक दिवस के रूप में मनाया जाए तो यह मेरे लिये गौरवपूर्ण सौभाग्य होगा तब से उनकी जयन्ती यानि 5 सितम्बर को शिक्षक दिवस मनाया जाने लगा।

इस दिन शिक्षकों को समाज के विकास में उनके अनकहे योगदान के लिये भी राष्ट्रपति द्वारा राष्ट्रीय शिक्षक पुरस्कार से शिक्षकों को सम्मानित किया जाता है। विद्यालयों में छात्र अपने पसंदीदा शिक्षक को गुलाब, हस्तनिर्मित कार्ड और उपहार भी देते हैं। अलग–अलग देशों में अलग–अलग तिथियों पर शिक्षक दिवस मनाया जाता है।

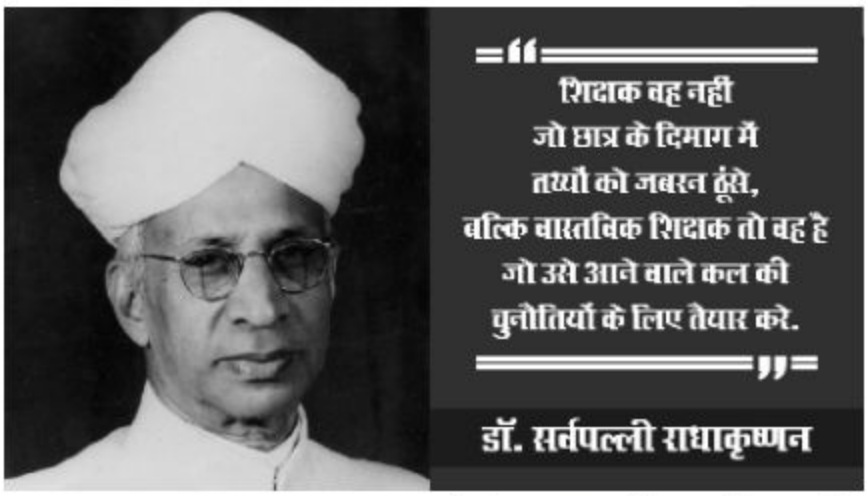

शिक्षक हमारे जीवन में बहुत ही महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। वह हमारे लिए एक कुम्हार की तरह होते हैं जो हमें किसी सांचे में ढालने का कार्य करते हैं। हम तो केवल एक कच्ची मिट्टी के समान होते हैं। जिसको सही आकार देने का कार्य शिक्षक द्वारा किया जाता है। शिक्षक अपने प्रेम और ज्ञान की रोशनी से हमारे उज्ज्वल भविष्य का निर्माण करते हैं। शिक्षक छात्र को हर परिस्थिति में सही दिशा में ले जाने हेतु साथ देते है। शिक्षक किताबी ज्ञान के साथ ही दुनियादारी के बारे में भी मार्गदर्शन करते हैं। हर व्यक्ति की सफलता में एक शिक्षक का विशेष योगदान होता है। वह निःस्वार्थ भाव से अपने बच्चों के समान छात्रों का भविष्य बनाते हैं।

हर व्यक्ति को अपने जीवन में एक गुरु की आवश्यकता होती है जो उसका उचित मार्गदर्शन कर सके। यदि हमारे जीवन में कोई गुरु न हो तो एक कामयाब जीवन की कल्पना करना मुश्किल होगा। गुरु के बिना हमारा जीवन अधूरा है।

एक आदर्श शिक्षक की क्रिया और व्यवहार का प्रभाव उसके विद्यार्थियों, विद्यालय और समाज पर पड़ता है। इस दृष्टि से कहा जाता है कि अध्यापक राष्ट्र का निर्माता होता है। अतः अध्यापक अपने कार्यों को सफलतापूर्वक एवं उचित प्रकार से करने के लिए आवश्यक है कि उसमें नेतृत्व शक्ति भी होनी चाहिए। एक आदर्श शिक्षक में वेशभूषा, अच्छा व्यक्तित्व, उच्च गुणवत्ता, नेतृत्वशक्ति, धैर्यवान, विनोद प्रियता, उत्साही, आत्मसम्मानी, सम्बन्ध क्षमता आदि गुणों का होना आवश्यक है।

गुरु की ऊर्जा सूर्य सी, अम्बर सा विस्तार।
गुरु की गरिमा से बड़ा, नहीं कहीं आकार।।
गुरु ही सींचे बुद्धि को, उत्तम करे विचार।
जिससे जीवन शिष्य का बने स्वयं उपहार।।

(लेखक सेवानिवृत्त प्रधानाचार्य, विद्याभारती)

ISSN No. 2581-3528

राजनीति में राष्ट्रीय विकास की समग्रता का अभाव

प्रो. (डॉ.) अनिल कुमार निगम

प्रवर्तन निदेशालय की भूमिका को लेकर विपक्षी दल संसद के अंदर और बाहर जमकर हंगामा कर रहे हैं। मनी लॉन्डरिंग अथवा भ्रष्टाचार पर लगाम लगाने के लिए प्रवर्तन निदेशालय आरोपी नेताओं के ठिकानों पर छापेमारी कर रहा है। निदेशालय की छापेमारी और उसके अधिकारों को परिभाषित करने के लिए जिस तरीके से सुप्रीम कोर्ट ने अपना फैसला सुनाया है, वह भारतीय राजनीति को यह स्पष्ट संदेश दे रहा है कि राजनीति में शुचिता, पवित्रता और आमजन के प्रति निश्छल सेवा भाव का होना आवश्यक है। आज राजनीति में राष्ट्र हित और राष्ट्र के समग्र विकास का भाव देखने को बहुत कम मिलता है। इसके विपरीत राजनीति में स्वहित पर फोकस किया जाता है। यही कारण है कि राजनीति में राष्ट्र प्रथम की जगह निहितार्थों पर फोकस किया जा रहा है।

सुप्रीम कोर्ट ने 27 जुलाई को धनशोधन निवारण अधिनियम (पीएमएलए–2002) के तहत प्रवर्तन निदेशालय (ED) के खिलाफ लगभग 200 याचिकाओं को खारिज कर दिया और उसने अपने ऐतिहासिक निर्णय में कहा कि ईडी को मिले अधिकार उचित हैं। धारा–19 के तहत गिरफ्तारी का अधिकार मनमानी नहीं है। न्यायमूर्ति ए.एम. खानविलकर, न्यायमूर्ति दिनेश माहेश्वरी और न्यायमूर्ति सी.टी.रवि कुमार की पीठ ने पीएमएलए के कुछ प्रावधानों की वैधता को बरकरार रखते हुए कहा कि धारा–5 के तहत धनशोधन में संलिप्त लोगों की संपति कुर्क करना संवैधानिक रूप से वैध है। साथ उसने यह भी कहा कि हर मामले में ईसीआईआर (प्रवर्तन मामला सूचना रिपोर्ट) अनिवार्य नहीं है। ईडी की ईसीआईआर पुलिस की प्राथमिकी के बराबर होती है। अगर ईडी किसी की गिरफ्तारी के समय उसके आधार का खुलासा करता है तो यही पर्याप्त है। अदालत ने पीएमएलए की धारा 19 की संवैधानिक वैधता को दी गई चुनौती के संबंध में कहा कि उसे खारिज किया जाता है। इस धारा में कड़े सुरक्षा उपाय किए गए हैं। प्रावधान में कुछ भी मनमानी के दायरे में नहीं आता।

प्रवर्तन निदेशालय एक बहु अनुशासनिक संगठन है, जिसका गठन आर्थिक अपराधों और विदेशी मुद्रा कानूनों के उल्लंघन की जांच के लिए किया गया। इसकी स्थापना 01 मई, 1956 को उस समय हुई, जब विदेशी मुद्रा विनियमन अधिनियम 1947 (फेरा) के अंतर्गत विनिमय नियंत्रण विधियों के उल्लंघन को रोकने के लिए एक प्रवर्तन इकाई का गठन किया गया था। वर्ष 1960 में इस निदेशालय का प्रशासनिक नियंत्रण, आर्थिक कार्य मंत्रालय से राजस्व विभाग में हस्तांतरित कर दिया गया। वर्तमान में, निदेशालय राजस्व विभाग, वित्त मंत्रालय, भारत सरकार के प्रशासनिक नियंत्रण में है।

ध्यातव्य है कि आर्थिक उदारीकरण की प्रक्रिया के चलते फेरा–1973 को खत्म करके उसके स्थान पर 1 जून 2000 से विदेशी मुद्रा अधिनियम1999– फेमा लागू किया गया। बाद में एक नया कानून धन शोधन निवारण अधिनियम–2002 (पीएमएलए) बना और उसी के बाद प्रवर्तन निदेशालय को पहली जुलाई 2005 इस कानून का पालन कराने की जिम्मेदारी सौंपी गयी। इसी तरह से जब विदेशों में शरण लेने वाले आर्थिक अपराधियों की संख्या में वृद्धि होने लगी तो सरकार ने भगोड़ा आर्थिक अपराधी अधिनियम–2018 पारित किया और प्रवर्तन निदेशालय को 21 अप्रैल 2018 से इसे भी लागू करने का दायित्व दे दिया।

हालांकि केंद्र में अन्य दलों की सरकारों के दौरान भी ईडी यदा–कदा छापेमारी और कार्रवाई करती रही थी। लेकिन एनडीए की सरकार आने के बाद ईडी की सक्रियता काफी तेज हो गई है। इस एजेंसी की सक्रियता से राजनैतिक दलों, खासतौर पर विपक्षी दलों में जबरदस्त बेचैनी है। हालांकि इस बात से भी इनकार नहीं कर सकते कि सत्ता में बैठे नेताओं में भी बराबर बेचैनी है। लेकिन जिन नेताओं के यहां आए दिन केंद्रीय जांच एजेंसियां दस्तक दे रही हैं, उनकी तो सांस फूल रही हैं। बौखलाए विपक्षी नेता इस सक्रियता के आधार पर ही सत्ताधारी दल पर केंद्रीय एजेंसी के दुरुपयोग का आरोप लगा रहे हैं।

शिक्षक भर्ती घोटाले मामले में जिस तरीके से पश्चिम बंगाल के पूर्व मंत्री पार्थो चटर्जी और उसकी करीबी अर्पिता मुखर्जी के ठिकानों पर छापेमारी कर करोड़ों की नकदी, विदेशी मुद्रा, सोना, अचल संपत्ति और गहने बरामद किए गए हैं, उससे तृणमूल कांग्रेस भी आश्चर्यचकित है। पूर्व केंद्रीय मंत्री पी चिंदबरम के बेटे कीर्ति चिदम्बरम, दिल्ली के स्वास्थ्य मंत्री सतेंद्र जैन, महाराष्ट्र सरकार के पूर्व मंत्री नवाब मलिक, शिवसेना सांसद संजय राउत सहित अनेक नेता ईडी के शिकंजे में आ चुके हैं। ईडी के छापों से देश में राजनीतिक माहौल गर्माया हुआ है। प्रमुख विपक्षी दल कांग्रेस पार्टी की नेता सोनिया गांधी और राहुल गांधी समेत कई नेता ईडी की पूछताछ का सामना कर चुके हैं। नेशनल हेराल्ड मामले में छापेमारी की कार्रवाई भी हो चुकी है। इसके अलावा अन्य कई नेता भ्रष्टाचार और कालेधन को लेकर ईडी के राडार पर हैं। ऐसा नहीं है कि ईडी केवल राजनैतिक दलों के खिलाफ ही कार्रवाई करती है। ईडी कालेधन के मामले में वीवो जैसी चीनी मोबाइल कंपनी के खिलाफ भी बड़ी कार्रवाई कर चुकी है।

ऐसे में अहम सवाल यह है कि ईडी की कार्रवाई पर विपक्षी दल इतना हंगामा क्यों बरपा रहे हैं? ईडी अगर कानूनी दायरे में रहकर कालेधन को सफेद करने अथवा भ्रष्टाचार में लिप्त लोगों के खिलाफ कार्रवाई कर रही है तो इसमें इतना शोर मचाने की क्या आवश्यकता है? अगर पूर्व सरकारों के कार्यकाल में भ्रष्टाचार और भ्रष्टाचारियों के खिलाफ कार्रवाई नहीं की गई तो इसके लिए जिम्मेदार कौन है? अब अगर राजनीति में भ्रष्टाचार के खिलाफ माहौल बनाकर शुचिता की राजनीति को प्रमुखता दी जा रही है तो इतना चीखना और चिल्लाना क्यों? दूसरी बात अगर आरोपी कानूनी तौर पर दुरुस्त हैं और उन्होंने कानून का उल्लंघन नहीं किया है तो इस कार्रवाई से बेचैनी कैसी? वास्तविकता तो यह है कि स्थिति ऐसी होती जा रही है कि राजनैतिक दलों के विरोध के बावजूद ईडी की छापेमारी से पीड़ित नेताओं को अब जनता की सहानुभूति तक नहीं मिल रही। जनता में कहीं न कहीं संदेश जा रहा है कि इन नेताओं ने जो भ्रष्टाचार किया है, वे उसी का दुष्परिणाम झेल रहे हैं।

(लेखक आईएमएस, गाजियाबाद में पत्रकारिता एवं जनसंचार संकाय के चेयरपर्सन हैं)

ISSN No. 2581-3528

कश्मीर घाटी की अपराजिता शिक्षाविद् बेगम जफरअली

डॉ. नीलम कुमारी

धरती का स्वर्ग कहे जाने वाले भू–भाग कश्मीर पर जब महराजा हरिसिंह के शासनकाल में उनकी रियासत के गृह और न्यायिक विभाग के मंत्री खान बहादुर आगा सैय्यद हुसैन ठाकुर जो स्वयं भी कश्मीर के पहले मैट्रिक पास व्यक्ति थे, जिन्होंने बाद में राज्यपाल तथा जम्मू कश्मीर के उच्च न्यायालय के प्रथम न्यायाधीश के रूप में अपनी सेवाएं भी दीं, के घर में वर्ष 1901 में जब एक कन्या ने जन्म लिया, तब किसी को यह तनिक भी अनुमान नहीं था कि यह कन्या कश्मीर की वो प्रथम महिला बनेगी जो मैट्रिक पास करके कश्मीर घाटी की महिलाओं के लिए शिक्षा के द्वार खोलकर इतिहास के पन्नों पर अपना नाम अंकित कर देगी।

वर्ष 1901 में जन्मीं बेगम ज़फर अली अपने बचपन में सैय्यदा फातिमा हुसैन के नाम से जानी जाती थीं। यह वह समय था जब कश्मीर घाटी में महिलाओं को खुलकर जीने का अधिकार नहीं था। वे परदे में रहती थीं, लड़कियों और महिलाओं मुख्य रूप से मुस्लिम समाज की महिलाओं और लड़कियों पर उनके परिवार वाले बहुत से प्रतिबन्ध लगाकर रखते थे, उन्हें शिक्षा से भी दूर रखा जाता था। लेकिन बेगम ज़फर अली के साथ ऐसा नहीं हुआ, उनके परिवार ने उन पर किसी भी प्रकार का प्रतिबन्ध नहीं लगाया। चूँकि बेगम ज़फर अली की माता सैय्यद सईदा सकीना सादात भी उस समय के कश्मीर में एक संपन्न व्यापारी घराने की थीं जिसका सम्बन्ध ईरान के सबज़ेवर सैय्यद परिवार से था तथा पिता भी कश्मीर के एकमात्र पहले मैट्रिक पास थे, अतः इनका परिवार शिक्षा के महत्त्व को समझता था। बेगम ज़फर अली के परिवार ने किसी भी कार्य के लिए उन पर प्रतिबन्ध नहीं लगाया। उनके माता–पिता ने उन्हें प्रारंभ से ही शिक्षा के लिए आगे बढ़ाया, उन्हें शिक्षित कर एक योग्य नागरिक बनाया। यहाँ तक कि उनके परिवार द्वारा उन्हें शिक्षित करने के लिए एक अध्यापिका भी रखी गई।

बेगम जफर अली का विवाह उनके चचेरे भाई आगा जफर अली से हुआ था। जिनसे उन्हें तीन संतानें हुई। विवाह के बाद भी बेगम ने अपनी शिक्षा को प्रभावित नहीं होने दिया। वह अपनी शिक्षा के लिए पर्याप्त समय निकालने में सफल रही। उनकी शिक्षा के लिए उनके पति ने भी उन्हें बहुत सहयोग दिया। बेगम जफर अली का झुकाव उनकी आगे की पढ़ाई व सामाजिक कार्यों की ओर उनके विवाह के पश्चात् भी जारी रहा। वर्ष 1925 में बेगम ज़फर अली को श्रीनगर के फतेह कदल इलाके के एक कन्या विद्यालय 'गर्ल्स मिशन हाई स्कूल' (वर्तमान में 'मालिंसन गर्ल्स स्कूल') द्वारा शिक्षण के लिए आमंत्रण दिया गया जिसे थोड़े संकोच एवं असमंजस के बाद उन्होंने स्वीकार कर लिया। इस स्कूल को मिस मांलिसन और मिस बोस के द्वारा संचालित किया जाता था। इस आमंत्रण को स्वीकार करने के बाद बेगम ज़फर अली ने अपने बच्चों के लिए गृह शिक्षक की व्यवस्था की और उन्होंने उस स्कूल में पढ़ाना शुरू किया। यहीं से बेगम जफर अली के शिक्षण व्यवसाय से जुड़ने की यात्रा आरम्भ हुयी। इसी समय में उन्होंने सामाजिक कार्यों में भी भाग लेना प्रारंभ किया तथा अपनी क्षमता के अनुसार स्कूल में पढ़ने वाली लड़कियों को जागरूक करने का कार्य आरम्भ कर दिया। उन्होंने वहां की लड़कियों को शिक्षा के साथ–साथ शारीरिक स्वच्छता और आत्मनिर्भरता के लिए भी प्रोत्साहित किया। उन्होंने लड़कियों को व्यक्तिगत, शारीरिक स्वास्थ्य और व्यवहार में अच्छी आदतों को सम्मिलित करना सिखाया। बेगम जफर अली का शिक्षा के प्रति अनुराग किसी से छिपा नहीं था अतः इसी बीच उनके गृह शिक्षक ने उन्हें मैट्रिक परीक्षा देने का सुझाव दिया।

इस समय तक कश्मीर घाटी में किसी भी महिला ने मैट्रिक पास नहीं किया था, इसलिए उन्हें परीक्षा देने में हिचकिचाहट हो रही थी। परन्तु उन्होंने अपनी हिचकिचाहट पर नियंत्रण करते हुए और शिक्षा के प्रति अपने अनुराग के लिए परीक्षा देने का निर्णय लिया। वर्ष 1930 में उन्होंने मैट्रिक परीक्षा दी और उस परीक्षा में वह द्वितीय श्रेणी के साथ उत्तीर्ण हुई। बेगम जफर अली के परीक्षा में सफल परिणाम ने उस समय में समाज की एक बहुत बड़ी बाधा को तोड़ने का कार्य किया। कश्मीर में इस उपलब्धि को हासिल करने वाली वह पहली महिला बन गयी थीं। इसके लिए उन्हें स्वर्ण पदक भी दिया गया।

कश्मीर में मैट्रिक पास करने वाली प्रथम महिला होने की इस उपलब्धि ने बेगम जफर अली की शिक्षा और महिलाओं के लिए कार्य करने की दिशा में उर्जा भरने का काम किया। वर्ष 1938 में उन्होंने अपनी स्नातक की शिक्षा पूरी की। इसके बाद उन्होंने अपनी उच्च शिक्षा भी जारी कर दी थी। बेगम ज़फर अली ने अपनी उच्च शिक्षा प्राप्त करने के बाद बहुत से स्कूलों में शिक्षिका के रूप में भी कार्य किया। अपनी योग्यता के बल पर उन्होंने कश्मीर घाटी के कई अलग–अलग स्कूलों में हेड मिस्ट्रेस के पद पर अपनी सेवाएँ दीं। शिक्षा अधिकारी, मुख्य शिक्षा अधिकारी और कश्मीर के स्कूलों के मुख्य निरीक्षक के रूप में भी उन्होंने कार्य किया। मुख्य निरीक्षक के पद के निर्वहन के क्रम में ही उन्होंने स्कूल में मध्याह्न भोजन योजना भी लागू की। सेवानिवृत्ति से पूर्व वह कश्मीर में शिक्षा विभाग की उप निदेशक के पद पर भी नियुक्त की गयी थी। इसके अलावा वह जम्मू और कश्मीर के समाज कल्याण सलाहकार बोर्ड की सदस्य भी रही। वर्ष 1977–82 के बीच वह विधानसभा की सदस्य भी बनीं।

महिलाओं की शिक्षा के बारे में जागरूकता लाने के लिए उन्होंने शिक्षा के प्रचार–प्रसार के लिए अनेक कार्य किए। महिलाओं के अधिकारों में दृढ़ विश्वास रखने वाली बेगम जफर अली ने कश्मीर घाटी के

ISSN No. 2581-3528

घर–घर जाकर लोगों को लड़कियों को शिक्षा दिलाने के लिए जागरूक किया। जब उन्हें कश्मीर में स्कूलों के निरीक्षक के रूप में नियुक्त किया गया तो उनके लिए यह एक शिक्षाविद् के रूप में उनके जुनून के एक प्रमुख पुरस्कार के रूप में था।

कुछ लोगों के विरोध के चलते लड़कियों व महिलाओं को शिक्षित व जागरूक करना बेगम जफर अली के लिए भी एक बड़ी चुनौती भी कुछ समय के लिए बन गई थी। परंतु, सभी समस्याओं का कड़ाई से सामना करते हुए उन्होंने अपने विचारों को खुलकर समाज में रखा और इस कार्य के लिए वे जूनून की हद तक डटी रही। महिलाओं और लड़कियों को आत्मनिर्भर करने के लिए उन्होंने उनका दृढ़ता से साथ दिया। जिसके कारण उन्हें समाज द्वारा बहुत सी कठोर आलोचनाओं का भी सामना करना पड़ा। वह उन कठोर आलोचनाओं से घबरायी नहीं बल्कि सामाजिक कार्यों के लिए और आगे बढ़ती रही।

बेगम जफर अली एक बहुत अच्छी वक्ता थी। वह जागरूकता के लिए सार्वजनिक स्थानों पर भाषण दिया करती थी। वह कश्मीर घाटी में महिलाओं में शिक्षा के प्रति जागरूकता के बहुत से सार्वजनिक कार्यक्रमों और विद्यालयों में भाषण देने जाती थी। बेगम ज़फर अली हमेशा से हर काम में अपना श्रेष्ठ देती रहीं। उन्होंने विद्यालय में टीचर्स क्लब बनाया, जिसमें उन्होंने भी भाग लिया। सार्वजनिक जीवन में उनकी सक्रियता और सजगता के बाद में टीचर्स क्लब को और मजबूत किया। वह कश्मीर की महारानी तारा देवी के साथ इसकी प्रमुख सदस्य थी। टीचर्स क्लब द्वारा बहुत सी सार्वजनिक सभाएं व कार्यक्रम आयोजित होते थे और बेगम उनमें महत्वपूर्ण भूमिका निभाती थी। इस क्लब का मुख्य उद्देश्य महिला मुद्दों पर बात करना और उनके अधिकारों के प्रति समाज को जागरूक करना था। बेगम ज़फर अली भारत में महिला आंदोलन में बहुत सक्रिय रही थी। वह लेडीज क्लब की जनरल सेक्रेटरी थी। आजादी से पूर्व बेगम अली 'ऑल इंडिया वुमेन कॉन्फ्रेंस' के सचिव के पद पर भी रही।

बेगम जफर अली ने कश्मीर घाटी में महिलाओं के लिए तकनीकी प्रशिक्षण केंद्र खोला, महिला शिक्षा क्षेत्र में महिलाओं को और अधिक शिक्षित करने के लिए अपने गांव में बहुत से कार्यक्रमो का आयोजन भी करवाया जिससे कि महिलाएं और अधिक शिक्षित हो सकें और अपना अधिक से अधिक विकास कर सकें। बेगम जफर अली ने अन्य सामाजिक मुद्दों के साथ–साथ शिक्षा और महिला स्वतंत्रता के लिए अनेक सुधारों को लाने का प्रयास किया। महिला शिक्षा एवं जागरूकता के प्रति उनके निरंतर प्रयास और मेहनत के बल पर वर्ष 1987 में उन्हें पद्मश्री पुरस्कार से सम्मानित किया गया। उन्होंने हमेशा से ही सामाजिक कार्यों में अहम भूमिका निभाई हैं।

बेगम जफर अली कश्मीर की पहली महिला मैट्रिक पास थीं। वह एक शिक्षाविद् और समाज सुधारक बनने के लिए पैदा हुई थीं। उन्होंने महिला शिक्षा की अच्छाइयों के बारे में समाज को समझाया। उनका उद्देश्य महिलाओं को शिक्षा प्राप्त करने के लिए प्रोत्साहित करके उन्हें सशक्त बनाना था। उन्होंने शिक्षा में सुधार, महिलाओं की मुक्ति और अन्य सामाजिक मुद्दों पर अपने जीवनकाल में अहम भूमिका निभाई। वे अपने जीवनकाल में निरंतर सामाजिक उत्थान के लिए कार्य करती रहीं। वह एक के बाद एक भूमिका निभाकर शिक्षा के क्षेत्र में बड़ी भूमिका निभाती रही । इसी तरह कार्य करते हुए इस कठोर व संघर्ष से भरे सफर के बाद बेगम जफर अली ने साल 1999 में इस दुनिया को हमेशा के लिए अलविदा कह दिया।

(लेखिका किसान पी. जी कॉलेज सिम्भावली हापुड़ (चौ.चरणसिंह विश्वविद्यालय, मेरठ उत्तर प्रदेश में अंग्रेजी विभाग की विभागाध्यक्ष हैं)

ISSN No. 2581-3528

हमारी हिन्दी

डॉ. उर्विजा शर्मा

"मानस भवन में आर्यजन, जिसकी उतारें आरती
भगवान भारतवर्ष में, गूंजे हमारी भारती।"

(मंगलाचरण भारत भारती मैथिलीशरण गुप्त)

हिन्दी वर्तमान में 'भारतीयता' का प्रतिबिंब बन चुकी है। प्रत्येक राष्ट्र की पहचान उसकी सभ्यता, संस्कृति, जीवन पद्धति, नागरिकों के जुड़ाव के साथ–साथ भाषा से होती है। इस मानक पर भारत की यदि कोई भाषा खरी उतरती है तो वह 'हिन्दी' ही है। सातवीं शताब्दी में शौरसैनी अपभ्रंश से निसृत हिन्दी अपना लम्बा इतिहास समेटे हुए है। कहना ना होगा हिन्दी देवभाषा संस्कृत की परम्परा की वाहक रही है। यद्यपि सातवीं सदी से 21 वीं सदी की यात्रा में कई उतार–चढ़ाव हिन्दी भाषा के रहे। हिन्दी का जो मानक रूप संविधान में 'राजभाषा' के रूप में स्वीकृत हुआ, उसके अलावा भी हिन्दी की वंशावली में अनेक बोलियों का योगदान रहा जिनमें खड़ी बोली, ब्रजभाषा, अवधी, बघेली, छत्तीसगढ़ी, मैथिली, मगही, कुमांउनी, बांगरू, मेवाती, मालवी, आदि प्रमुख है। यद्यपि कुछ विद्वानों का मत है कि हिन्दी भाषा का विकास दसवीं शताब्दी में हुआ, तथापि दिल्ली सल्तनत, मुगलकाल के त्याघातों एवं अत्याचारों के होते हुए भी अनेक कालजयी साहित्कार यथा–कबीर, सूर, तुलसी, मीरा, बिहारी, घनानंद, रसखान, केशव हिन्दी की परम्परा को समृद्ध करते रहे। तत्पश्चात स्वाधीनता आंदोलन में हिन्दी तथा हिन्दी के महान साहित्यकारों ने आजादी की लौ को निरंतर प्रज्ज्वलित किया। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, महावीर प्रसाद द्विवेदी, प्रेमचन्द, जयशंकर प्रसाद, मैथलीशरण गुप्त, निराला, दिनकर, नागार्जुन जैसे स्वनाम धन्य साहित्यकारों ने अपनी लेखनी से अंगेजी हुकूमत की चूलें हिला दीं। उक्त साहित्यकारों ने अपनी रचनाओं के माध्यम से जनता में राष्ट्रप्रेम, देशभक्ति के साथ–साथ स्वाभिमान का भाव भी जगा दिया। निराश–हताश जनता जो शासन से त्रस्त हो चुकी थी पुनः स्वतंत्र होने की लालसा में निरन्तर अपने आत्मबल को बनाये रही। केसरी, सरस्वती, जागरण, प्रताप आदि पत्रिकाओं ने भी स्वतंत्रता की भावना को बनाये रखा। दृष्टव्य है कि पराजय न स्वीकार करना ही विजय प्राप्त करने का सबसे बड़ा साधन है। यह भाव तत्कालीन भारतीयों के हृदय में यदि जीवित रहा तो इसका कारण हिन्दी ही थी।

स्वाधीनता प्राप्ति के उपरांत भी निरंतर यह विमर्श चलता रहा कि 'राष्ट्रभाषा' किसे घोषित किया जाये। हिन्दी जो बहुसंख्यक भारतीयों के द्वारा बोली व समझी जाने वाली भाषा थी, स्वाभाविक रूप से उसे 'राष्ट्रभाषा' होने का गौरव मिलना चाहिए था, किन्तु कतिपय निहित राजनीतिक स्वार्थ के कारण हिन्दी को

'राजभाषा' घोषित किया गया, 'राष्ट्रभाषा' नहीं। विडंबना यह भी रही कि यह भी प्रावधान किया गया कि हिन्दी के साथ 'अंग्रेजी' भी लगभग 15 वर्षों तक राजभाषा बनी रहेगी। किन्तु 14 सितम्बर 1950 को की गयी घोषणा 'हिन्दी दिवस' के रूप में तो मनाई गयी पर अंग्रेजी के मोहपाश में आज भी हम जकड़े रह गये। यहां यह भी उल्लेखनीय है कि दक्षिण से हिन्दी विरोध के स्वर को निरंतर हवा दी गयी जिसका कारण राजनीतिक अधिक था। वर्तमान में विश्व के अधिकांश राष्ट्र में कोई एक भाषा 'राष्ट्रभाषा' के रूप में स्वीकृत है, फिर भारत में हिन्दी को क्यों नहीं राष्ट्रभाषा घोषित किया जाता? यह विचारणीय प्रश्न है। यदि आंकड़ों की दृष्टि से भी देखें तो अकेले भारत में ही लगभग 80 करोड़ लोग हिन्दी बोल सकते हैं, समझने वालों की संख्या तो और भी अधिक है। इसके अतिरिक्त मारीशम, फिजी, गयाना, फिनलैंड, सूरीनाम, ब्रिटेन, अमेरिका, पाकिस्तान, बांग्लादेश एवं चीन जैसे देशों में हिन्दी पढ़ी, बोली व समझी जाती है। वर्तमान में हिन्दी 'विश्वभाषा' के रूप में विकसित हो रही है। इसका प्रमाण यह है कि यह अंग्रेजी, मदारिन के साथ विश्व की 3 प्रमुख भाषाओं में एक है। विश्व के अनेक देशों में रामलीला का मंचन किया जाता है। नई शिक्षा नीति 2020 में भी मातृभाषा में शिक्षा देने का प्रावधान किया गया है। इस प्रकार बहुसंख्यक भारतीयों की मातृभाषा हिन्दी ही है जो हिन्दी को 'राष्ट्रभाषा' बनाने हेतु पर्याप्त कारण है। विज्ञान, तकनीकी के साथ–साथ कम्प्यूटर में भी हिन्दी सॉफ्टवेयर की उपलब्धता ने बहुत महत्वपूर्ण कार्य किया है। मीडिया में हिन्दी समाचार चैनलों की लोकप्रियता, फिल्मों, धारावाहिकों को मिली अपार सफलता इस बात का प्रमाण है कि हिन्दी निरंतर आगे बढ़ रही है। तथापि अनुवाद के क्षेत्र में पारिभाषिक शब्दावली के निर्माण के क्षेत्र में, लिप्यंतरण के क्षेत्र में अभी अधिक प्रयासों की आवश्यकता है। हिन्दी ब्लॉग तथा सोशल मीडिया के क्षेत्र में हिन्दी का कोई सानी नहीं है। साथ ही वर्तमान सरकार का हिन्दी को लेकर प्रयास भी उत्साहजनक है। तथापि कुछ समस्याओं का निराकरण आवश्यक है। यथा पाठ्यक्रम को रोजगारपरक बनाने की आवश्यकता है। भाषा के साथ सभ्यता, संस्कृति को जोड़ना आवश्यक है। हिन्दी टाइपिंग व कम्प्यूटर में कार्य करना शेष है। वर्तनी पर भी मेहनत की आवश्यकता है।

हिन्दी न केवल भारतीयता की प्रतीक है वरन् ज्ञान–विज्ञान की संवाहक भी है। संस्कृत बाड़मय के वैभव को समेटे, बोलियों की वाचिक परम्परा को लेकर निरंतर विकासोन्मुख है। हिन्दी भारत के अंतस् की आवाज है। अतः दुराग्रहों को त्यागकर राजनीतिक प्रपंचों को दरकिनार कर, भाषायी–विरोध से इतर समय की मांग है कि विश्वभाषा हिन्दी को 'राष्ट्रभाषा' घोषित किया जाये। कोई भी राष्ट्र जब तक एक संविधान, एक ध्वज के साथ–साथ एक भाषा को अंगीकृत नहीं करता उसमें सामाजिक, सांस्कृतिक समरसता उत्पन्न नहीं होती। 'राष्ट्र' के रूप में विकसित होने के लिए बहुसंख्यक नागरिकों की भाषा 'हिन्दी' के गौरव को आत्मसात करना ही होगा।

(लेखिका एस. डी. पी. जी. कॉलेज, गाजियाबाद एसोसिएट प्रोफेसर है)

ISSN No. 2581-3528

हिन्दी दिवस विशेष : कैसे हुआ कविता का उद्भव

डॉ. रविन्द्र शुक्ल

बात जब अविरल सुरमयी हिन्दी की आती है तो कविता रूपी तरंगे आपके अंदर अनायास ही उद्वेग मारती है। भारतीय भाषा हिन्दी हो या संस्कृत इनके उद्गम और स्वर के साथ ही कविता का उद्भव भी हो जाता है।

महर्षि बाल्मीकि जी की मानें तो करुणा में से काव्य का उदय होता है जो वैदिक काव्य की शैली भाषा और भाव से सर्वथा अलग और नवीन रहा। वाल्मीकि जी ने ब्रह्माजी के आशीर्वाद 'सम्पूर्ण रामायण' की रचना की जो काव्य की वो शैली है जो युग युगान्तर तक लोकप्रिय है .. ब्रह्मा जी ने बाल्मीकि जी को आदिकवि की उपाधि भी दी और कहा कि –

यावत् स्थास्यन्ति गिरयः सरितश्चमहीतले।

तावद्रामायणकथा लोकेशुप्रचरिष्यन्ति॥

यानि आपकी रामकथा तब तक दुनिया में रहेगी जब तक पृथ्वी पर पहाड़ और नदियाँ रहेंगी।

कविता की इस यात्रा को अगर देखें तो अनुभूति और संवेदना के कवि श्रीसुमित्रानंदन पंत भी कहीं न कहीं महर्षि बाल्मीकि से सहमत नजर आते हैं, वो कहते हैं कि "वियोगी होगा पहला कवि, आह से उपजा होगा गान। निकलकर आँखों से चुपचाप, बही होगी कविता अनजान।।"

यानि श्री सुमित्रानंदन पंत की इन पंक्तियों के अनुसार भी कविता का जन्म वियोग और आह के बीच हुआ। किन्तु क्या सच में यहीं से कविता का उद्भाव हुआ ?

महाभारत में श्रीकृष्ण समरांगण में श्रीमद्भगवद्गीता जब गाते हैं तो ऐसा प्रतीत होता है कि कविता के उद्भाव के लिए करुणा को माने तो कहीं न कहीं नवरस के बाकी भावों का तिरस्कार हो सकता है। श्रीकृष्ण ने रणसमर में जो कहा उसे समझें तो वो इस प्रकार है –

योद्धा होगा पहला कवि, युद्ध से निकला होगा गान।

क्षेत्ररण से बहकर सायास, बही होगी कविता सप्रमान॥

अगर उपरोक्त का छिद्रान्वेशण करें तो सहज ही दिखाई देता है कि श्रीमद्भगवद्गीता अपने आप में उत्कृष्ट कविता है जिसकी रचना श्रीकृष्णजी द्वारा समरांगण में की गई। जिसमें अठारह अध्याय और सात सौ श्लोक हैं। जिसे अठारह अक्षोहिणी सेना और दुनियाभर के महान योद्धाओं के समक्ष श्रीकृष्ण ने सुनाया और जिसका सीधा प्रसारण युद्धक्षेत्र से महलों तक हुआ। इस प्रसारण के शिल्पी थे संजय और गायक थे भगवान श्रीकृष्ण। कहने का तात्पर्य यह है कि कविता न वियोग है, न आह और कविता न ही बेचारगी से जन्मती है अपितु भावोद्रेक के प्रवाह से निसृत होती है। यह भावोद्रेक शौर्य, करुणा, वात्सल्य, भक्ति, साधना किसी से भी प्रकट हो सकता है। इसीलिए

साहित्य में नवरसों की मान्यता है। इन रसों में कविता का प्रस्फुटन उस रस का अनुकूलन मिलने से होता है। यदि कविता की उत्पत्ति की बात करनी हो तो भाव, रस और उद्वेग को देखते हुए ये कहना गलत नहीं होगा कि सृष्टि के साथ ही कविता भी जन्मी है। चाहे वो हवा चलती है, नदी बहती है, झरने बहते हैं, छिंगुर गाते हैं, तारे टिमटिमाते हैं, लहरें शोर मचाती हैं, प्रकृति के हर नर्तन में लय है और जहाँ लय है वहाँ कविता है। अनेक विद्वानों का मत है कि कविता तो छन्दबद्ध ही होती है। छन्द शब्द की उत्पत्ति संस्कृत की छद् धातु में असुन प्रत्यय लगाने से हुई है जिसका अर्थ है प्रसन्न करना, आच्छादित करना, बाँधना आदि। कविता में प्रयुक्त होने वाले वर्ण, मात्रा, यति आदि का संगठन ही छन्द हैं। वस्तुतः छन्द में मात्रा, वर्ण, यति, चरण, गति, गण आदि की एक निश्चित व्यवस्था रहती है। सारी सृष्टि वास्तव में लयात्मक अर्थात संगीतमय है। सृष्टि का एक घटक मनुष्य भी उसी का अनुचर है। विज्ञान द्वारा यह भी सिद्ध हो चुका है कि यदि कर्णप्रिय संगीत पौधों को सुनाया जाए तो उनमें विकास की गति तीव्र हो जाती है और यदि दुधारू पशुओं यथा गाय को कर्णप्रिय संगीत सुनाया जाए तो उनमें दूध की मात्रा भी बढ़ जाती है। ऐसे में मनुष्य ने अपनी उत्पत्ति के साथ ही प्रकृति के साथ गुनगुनाना सीख लिया था और सीख लिया था गुनगुनाना और सीख लिया था अपने हर रस और भाव के साथ कविताओं में जीना। ऐसी स्थिति कविता या छन्द भी उतना ही पुराना है जितना मानव या सृष्टि। ऋग्वेद के पुरुष सूक्त के नौवे मंत्र में भी छन्द की उत्पत्ति ईश्वर से बतायी गयी है। श्रीमद्भगवद्गीता में भी वेदों को छन्दस कहकर संबोधित किया गया है। महर्षि पाणिनि के अष्टाध्यायी में भी छन्दस शब्द वेदों के लिए प्रयोग किया गया है। अमरकोश में छन्द शब्द का अर्थ 'मन की बात' या अभिप्राय से लिया गया है। छन्दों को वेद मंत्रों का आधार माना गया है। अगर देखें तो वेद मंत्र से ही कविता की उत्पत्ति हुई । ऋग्वेद में तो "कविमनीषी कीभू स्वयंभू" कहा गया है। अर्थात् कविता का जन्म सृष्टि के साथ ही हुआ। जिस लय, चरण, वर्ण की बात वाल्मीकि जी ने की वह पहले से ही परिभाषित था। उन्होने भी अपने इस श्लोक में यह कहा कि–

पादबद्धोक्षरसमः तन्त्रीलय समन्वितः।

शोकार्तस्य प्रवृत्ते मे, श्लोकोभवतुनान्यथा॥

अतः यह प्रमाणित होता है कि कविता का जन्म सृष्टि के साथ ही हुआ और धीरे–धीरे वह हर युग के साथ नए विकास के मार्ग पर लयबद्ध हो कर प्रकृति और मानवभाव के साथ अंतहीन यात्रा पर निरंतर चलता रहा। परमपिता परमात्मा अपने पुत्र और पुत्रियों पर कृपा करके अलग–अलग शक्तियाँ समाहित करता है। इन अद्भुत शक्तियों में से एक शक्ति का नाम है – काव्यशक्ति।

(लेखक उत्तर प्रदेश सरकार के पूर्व शिक्षा मंत्री हैं)

ISSN No. 2581-3528

भारतीय संस्कृति के आदर्श पत्रकार : देवर्षि नारद

अनुराग सिंह

देव ऋषि नारद आदिकाल से भारतीय संस्कृति में एक सन्देश वाहक के रूप में एक महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं यदि हम उनके व्यक्तित्व की कल्पना करें तो एक छवि भूत, वर्तमान एवं भविष्य–तीनों कालों के ज्ञाता, सत्यभाषी, स्वयं का साक्षात्कार करके स्वयं में सम्बद्ध, कठोर तपस्या से लोकविख्यात, अज्ञान रूपी अंधकार को पूर्ण रूप से नष्ट कर ज्ञान के प्रकाश तेज से आच्छादित, ऐसे मंत्रवेत्ता तथा अपने ऐश्वर्य (सिद्धियों) के बल से सर्वत्र पहुँचने में सक्षम, जाति, वर्ग, समुदाय, सम्प्रदाय के सीमाओं से परे व्यक्ति के रूप में उभरती है, जिसके व्यक्तित्व को हर वर्ग में मान्यता प्राप्त है। आधुनिक दौर में कुछ तथाकथित बुद्धिजीवियों ने अपने अल्प ज्ञान एवं निहित स्वार्थ के कारण नारद को एक चाटुकार, किसी सूचना को तोड़ मरोड़ कर या इधर की बात उधर करके, दो लोगों के बीच आग लगाने के लिये प्रचारित किया परन्तु इसके विपरीत नारद एक ऐसा व्यक्तित्व है जो तेजस्वी, सम्पूर्ण वेदान्त एवं शास्त्र के ज्ञाता तथा समस्त विद्याओं में पारंगत हैं, वे ब्रह्मतेज एवं अलौकिक तेजोरश्मियों से संपन्न हैं। जो हर पल जन कल्याण की उनकी इच्छा रखते है। सकारात्मकता, सज्जनता एवं परोपकार उनका मुख्य ध्येय होता है। देव ऋषि नारद को पूरे ब्रह्माण्ड में घटित घटनाओं की जानकारी होती थी और उसे लोक कल्याण के रूप में प्रेषित करते थे नारद को विष्णु का संदेशवाहक माना गया है जिनके विभिन्न उपनाम से ख्याति प्राप्त है, उन्हें संचारक अर्थात् सूचना देने वाला पत्रकार कहा गया है नारद को आचार्य पिशुन के नाम से भी जाना जाता है जिसका अर्थ है सूचना देने वाला संचारक, सूचना पहुंचाने वाला, सूचना को एक स्थान से दूसरे स्थान तक देने वाला है। आचार्य का अर्थ गुरु, शिक्षक, यज्ञ का मुख्य संचालक विद्वान अथवा विज्ञ होता है। इससे यह स्पष्ट है कि देवर्षि नारद तीनों लोकों में सूचना अथवा समाचार के प्रेषक के रूप में परम लोकप्रिय पत्रकार एवं संवाद–प्रेषक, संवाद–वाहक के रूप में मान्यता प्राप्त थी। आज के आधुनिक युग में अगर हम देव ऋषि नारद द्वारा रचित नारद भक्ति सूत्र को समझे तो पायंगे की नारद ने पत्रकरिता के निति नियम की व्याख्या बड़ी सूक्ष्मता से की है यह केवल पत्रकारिता ही नहीं बल्कि आधुनिक काल में मीडिया के लिए शाश्वत सिद्धांतों को दर्शाता है। जिसमे कहा गया है कि, जाति, विद्या, रूप, कुल, दान, जैसे कार्यों के कारण पत्रकारिता द्वारा भेद नहीं किया जाना चाहिए। साथ ही, भक्ति सूत्र 72 में

एकात्मता को पोषित करने वाला अत्यंत सुंदर वाक्य है, जिसमें देवऋषि श्री नारद जी समाज में भेद उत्पन्न करने वाले कारकों को बताकर उनको निषेध करते हैं। आज के समय में यह सूत्र कितना प्रासांगिक है जब पत्रकारिता के ऊपर कई तरह के लांछन लग रहे हैं आज के पत्रकारों को देश हित को सर्वोपरि रखते हुए ही अपनी पत्रकारिता करनी चाहिए ताकि देश के आंतरिक माहौल को स्वस्थ रखा जा सके एवं इसमें किसी भी प्रकार के विष घोलने का प्रयास कदाचित नहीं होना चाहिए। इस संदर्भ में, श्री नारद पुराण पत्रकारों की कार्यप्रणाली को उच्च मानकों पर बनाए रखने में मदद कर सकता हैं। नारद सर्व मान्य थे वह लोक परलोक, राजा रंक, देव दानव, ऊंच नीच की सीमाओं से परे सुलझे हुए संदेशवाहक माने जाते हैं। एक पत्रकार का कहा हुआ समाज एवं देश हित में माना जाता है, पत्रकारिता के प्रति यह विश्वसनीयता नारदजी के कारण ही है। ऐसा इसलिये भी है कि नारद ने जैसा कहा, उसे उस समय हर किसी ने सौ प्रतिशत सत्य और तथ्यात्मक माना। इतना ही नहीं, नारद ने जो सुझाव दिया, उसे किसी दानव, मानव या देवता ने न माना हो, ऐसा भी प्रकरण नहीं आता है। आज की पत्रकारिता से तुलना करें तो नारद आधुनिक पत्रकरिता के सूत्रधार थे नारद घटना के स्थान से संवाद करते थे और सही सटीक सूचना देते थे उनके रिपोर्टिंग में जीवंतता के साथ सूक्ष्म और गहन अध्ययन के गुण विद्यमान थे वह टेबल रिपोर्टिंग के बजाय स्पॉट रिपोर्टिंग को मान्यता देते थे और सूचनाओं के पाखंड को खंडित कर लोकहित एवं लोक कल्याण के लिए संवाद करते थे।

नारद जी ने मीडिया के रूप और उसकी सीमाओं की भी व्याख्या की है जिसको समझना आज के आधुनिक पत्रकारिता में अति आवश्यक है आज तमाम टीवी चैनल एवं अखबार और वरिष्ठ पत्रकार अपने मतों को अपने स्वेच्छा अनुसार एवं अपने लाभ के लिए जनता पर थोपते हैं और राय बनाने की कोशिश करते है जिनका तथ्यों से कोई सरोकार नहीं होता और सूचना के प्रति एक भ्रम पैदा करता है और एक नकरात्मकता को समाज में फैलाता है जबकि नारद के अनुसार लोककल्याण हेतु पत्रकिरता का मापदंड विभिन्न मतों का प्रस्तुतिकरण है नारद ने बताया है कि अपने मतों को थोपना एक पत्रकार को सार्थक पत्रकारिता से रोकता है। नारद ने पत्रकार के कार्य योग्यता गुण की भी व्याख्या की है जिसको अपने पौराणिक ग्रथों से प्राप्त किया जा सकता है। न्यू मीडिया और इंटरनेट के दौर में नारद को समझना आवश्यक है क्योकि आज पत्रकारिता एक व्यापार बन गया है जिसका एक ही मकसद है लाभ अर्जित करना इस पर रोक एवं पत्रकारिता को सही दिशा देने के लिए यह आवश्यक है कि नारद द्वारा रचित सूत्रों का गहन अध्ययन किया जाए एवम पत्रकारिता की स्वतंत्रता उसके विकास के साथ भविष्य की चुनौती से निपटने के लिए उसका पालन किया जाए।

(लेखक आईएमएस गाजियाबाद में असिस्टेंट प्रोफेसर हैं)

ISSN No. 2581-3528

लोकमान्य तिलक द्वारा रोपा पौधा, आज देश का विशाल वट वृक्ष बन गया!!

नीलम भागी

जन्माष्टमी के 15 दिन बाद राधाष्टमी का त्योहार परंपरागत रूप से ब्रज क्षेत्र के साथ लगभग पूरे भारत में मनाई जाती है। भाद्रपद की शुक्ल पक्ष की अष्टमी (4 सितम्बर) को राधाष्टमी मनाई जाती है। मंदिरों में कीर्तन का आयोजन किया जाता है। महान शास्त्रीय संगीतकार, संगीतज्ञों के आराध्य, ध्रुपद के जनक स्वामी हरिदास का जन्म भी इसी दिन हुआ था। बैजू बावरा, तानसेन जैसे दिग्गज संगीतज्ञ उनके शिष्य थे। इनके जन्मोत्सव पर विश्वभर के शास्त्रीय संगीतज्ञ उन्हें भावांजलि देते हैं।

दक्षिण भारत में ओणम मुख्यतः केरल का सबसे प्राचीन पारंपरिक, धार्मिक, सांस्कृतिक उत्सव हैं, जिसे दुनियाभर में मलयाली समाज मनाता है। केरल में चार दिन की छुट्टी होती हैं। हर दिन का अपना अलग महत्व होता है। ऐसी मान्यता है कि इस दिन प्रत्येक वर्ष राजा महाबलि पाताल लोक से धरती पर अपनी प्रजा को आशीर्वाद देने आते हैं। ओणम उत्सव अपनी सांस्कृतिक प्रथाओं में नाव दौड़, नृत्य रुपों, फूलों, रंगीन कला, भोजन और पारंपरिक कपड़ों से लेकर ओनायद्या यानि भोज है, जिसमें केले के पत्ते पर 29 शाकाहारी व्यंजन परोसे जाते हैं। तिरुवोनम, दसवें दिन अपने घरों के प्रवेश द्वार पर आटे के घोल से अल्पना सजाते हैं। नये कपड़े पहनते हैं। ऐसा मानना है कि इस दिन राजा महाबली हर घर जाते हैं और परिवार को आशीर्वाद देते हैं।

तीन साल मुम्बई का मैंने गणेशोत्सव देखा। दस दिन महाराष्ट्र गणपतिमय रहता है। बप्पा के आवाहन से लेकर विसर्जन तक श्रद्धालु, आरती, पूजा, सांस्कृतिक कार्यक्रमों में, लगभग सभी उपस्थित रहते हैं। बच्चों को तो इन दिनों घर में रहना पसंद ही नहीं है। मांए खींच खींच कर इन्हें घर में खिलाने पिलाने लातीं, खा पीकर बच्चे फिर पण्डाल में। घरों में गणपति 1,3,5,7,9 दिन बिठाते हैं। गौरी पूजन, दो दिन लक्ष्मी पूजन, छप्पन भोग, त्यौहार के बीच में बेटियां भी गणपति से मिलने मायके आती हैं और बहुएं भी मायके जाती हैं। मसलन हमारे सामने के फ्लैट में रहने वाले परिवार ने गणपति बिठाए तो उनके तीनों भाइयों के परिवार दूसरे शहरों से वहीं आ गए। पूजा तो हर समय नहीं होती, बच्चे आपस में घुल मिल रहे हैं। महिलाओं पुरुषों की अपनी गोष्ठियां चल रहीं थी। एक दिन अष्टमी मनाई गई। ऐसा माना जाता है कि इस दिन गौंरा अपने गणपति से मिलने आती हैं। उपवास रखकर, कुल्हड़ के आकार या गुड़ियों के रुप में गौरी को पूजते हैं और सबको भोजन कराते हैं। दक्षिणा उपहार देते हैं पर उस दिन नियम है कुछ भी, जूठन नहीं फेंकते। यहां तक कि पान खिलाया तो उसका कागज भी दहलीज से बाहर नहीं डालते। अगले दिन दक्षिणा उपहार ले जा सकते हैं। शाम को आरती के बाद कीर्तन होता है। मंगलकारी बप्पा साल में एक बार तो आते हैं इसलिए उनके सत्कार में कोई कमी न रह जाए। अपनी सामर्थ्य के अनुसार मोदक, लड्डू के साथ तरह तरह के व्यंजनों का भोग लगाते हैं।

गणेश चतुर्थी के बाद मैं पहली बार लोखण्डवाला से इन्फीनीटी मॉल के लिए निकली। ढोल नगाड़ों की आवाजें, गणपति गोद में ले रखे हैं। उनके चेहरे से टपकती श्रद्धा को तो मैं लिखने में असमर्थ हूं। उनके सामने से भी बड़ा विसर्जन जूलूस आ रहा था। यहां ढोल से ज्यादा ऊंची आवाज में श्रद्धालु जयकारे लगा रहे थे,''गणपति बप्पा गोरिया, अगले बरस तू जल्दी आ। आनंद चतुर्दशी के दिन सोसाइटी के गणपति का विसर्जन था। नाचते जयकारे लगाते सब गणपति के जूलूस में चल दिए। पर्यावरण का ध्यान रखते हुए, वर्सोवा में एक तालाब बनाया था, वहां विर्सजन था। ट्रक में गणपति बाकि पैदल नाचते हुए जा रहे थे। मैं बैक रोड से जल्दी जल्दी पैदल वर्सोवा पहुंच गई। वहां बड़े मंच पर गणमान्य लोग बैठे थे। मैं किसी तरह तालाब के साथ मंच के पास खड़ी हो गई। इस जगह से मुझे तीनों सड़कों से आते विसर्जन के जुलूस दिख रहे थे। लोग अपने गणपति के साथ लाइन में प्रतीक्षा कर रहे थे। अपने नम्बर से पहले गणपति की आरती करते। तालाब में खड़े तीन आदमियों में से दो बड़ी श्रद्धा से गणपति लेकर विसर्जित करते। सब जोर जोर से जयकारे लगा रहे थे।

और मेरे दिमाग में अब तक की सुनी गणपति की कथाएं चल रहीं थीं। महर्षि वेदव्यास महाभारत की कथा लिखना चाह रहे थे पर उनके विचार प्रवाह की रफ्तार से, कलम साथ नहीं दे रही थी। उन्होंने गणपति से लिखने को कहा। उन्होंने लिखना स्वीकार किया पर पहले तय कर लिया कि वे लगातार लिखेंगे जैसे ही उनका सुनाना बंद होगा, वह आगे नहीं लिखेंगे। महर्षि ने भी गणपति से विनती कर, उन्हें कहा,'' आप भी एडिटिंग साथ साथ करेंगे।'' गणपति ने स्वीकार कर लिया। जहां गणपति करेक्शन के लिए सोच विचार करने लगते, तब तक महर्षि अगले प्रसंग की तैयारी कर लेते। वे लगातार कथा सुना रहे थे। दसवें दिन जब महर्षि ने आखें खोलीं तो पाया कि गणपति के शरीर का ताप बढ़ गया है। उन्होंने तुरंत पास के जलकुंड से जल ला कर उनके शरीर पर प्रवाहित किया। उस दिन भाद्रपद की चतुर्दशी थी। इसी कारण प्रतिमा का विर्सजन चतुर्दशी को किया जाता है। महाराष्ट्र इसे मंगलकारी देवता के रूप में पूजते हैं।

गणपति उत्सव की शुरुआत, सांस्कृतिक राजधानी पुणे से हुई थी। शिवाजी के बचपन में उनकी मां जीजाबाई ने पुणे के ग्रामदेवता कस्बा में गणपति की स्थापना की थी। तिलक ने जब सार्वजनिक गणेश पूजन का आयोजन किया था तो उनका मकसद सभी जातियों धर्मों को एक साझा मंच देना था। पहला मौका था जब सबने देव दर्शन कर चरण छुए थे। उत्सव के बाद प्रतिमा को वापस मंदिर में हमेशा की तरह स्थापित किया जाने लगा तो एक वर्ग ने इसका विरोध किया कि ये मूर्ति सबके द्वारा छुई गई है। उसी समय निर्णय लिया गया कि इसे सागर में विसर्जित किया जाए। दोनों पक्षों की बात रह गई। तब से गणपति विसर्जन शुरु हो गया।

हमारे गणपति का रात नौ बजे विसर्जन हुआ और मैं सबके साथ घर लौटी। गणपति विर्सजन में 4 से 9 बजे तक वहां खड़ी हर प्रांत के लोग देख रही थी आज तिलक की याद आ रही हैं उन्होंने अंग्रेजों के विरुद्ध सबको संगठित किया था। आज देश विदेश में भारतवासी इसे मिलजुल कर ही मनाते हैं।

लोकमान्य तिलक के लगाए पौधे की शाखाएं देशभर में फैल गईं हैं। उत्तर भारत में आनंद चतुर्दशी को गणपति विसर्जन होता है और जहां रामलीला होती है, उस स्थान का भूमि पूजन होता है।

(लेखिका, जर्नलिस्ट, ट्रैवलर, ब्लॉगर)

ISSN No. 2581-3528

नाट्यकलाओं के अधिष्ठात्रा देव नटराज और उनकी मूर्तिमत्ता

डॉ. शैलेश श्रीवास्तव

भारतीय सभ्यता के इतिहास में नाटक आदि से संबंधित प्रदर्शनकारी एवं रूपंकर कलाओं की बड़ी समृद्ध धारा प्रवाहमान रही है। इस संदर्भ में दुनिया–भर की सभी प्राचीनतम सभ्यताओं और संस्कृतियों के अंगरूप में नाटक की प्रस्तावना भी बड़ी रोचक है।

नाट्योद्भव की परंपरा को यदि हम विकासवादी क्रम में देखें तो आदिम मानवों की अभिव्यक्ति की बेचैनी ही कालांतर में उनकी भाषाओं और सभी कलाओं के विकास का आधार बनी इसी कारण सभी कलाएं बहुत अर्थों में एक दूसरे से गहरे रूप से अंतःसंबंधित भी हैं। आद्याचार्य भरतमुनि ने अपने पंचम वेद कहे जाने वाले ग्रंथ नाट्यशास्त्र में नाट्य के संबंध में ऐसा ही स्पष्ट किया है:–

न तज्ज्ञानं न तच्छिल्पं न सा विद्या न सा कला

न सौ योगो न तत्कर्म नाट्येऽस्मिन्नयन्नदृश्यते।

अर्थात् न कोई ऐसा ज्ञान है, न शिल्प है,न विद्या है, न कला, योग, संबंधित कौशल या कर्म ही हैं जो नाट्य में न दिखाई देते हों। अर्थात् सभी ज्ञान, शिल्प, विद्या, कला–कौशल, योग या कर्म का समावेश किसी न किसी रूप में नाट्य में समाहित हैं।

भारत में शास्त्रीय रूप से नाट्य विद्या के प्रवर्तक और संस्थापक के रूप में आदिदेव भगवान नटराज की प्रतिष्ठा है। उनका नृत्यमय स्वरूप विविध अभिव्यक्तिमूलक कला रूपों को बहुआयामी स्तर पर बड़े प्रभावी एवं सशक्त रूप में प्रकट–प्रत्यक्ष करता दिखाई देता है। इस रूप में रूप–वस्त्र सज्जा से परिपूर्ण देहयष्टि, योग मुद्रा में गतिमान संतुलन, नट, नृत्त, नृत्य और नाट्य की भंगिमा को बड़ा संश्लिष्ट विस्तार है।

तमिलनाडु में कावेरी नदी के पास चिदंबरम का वह वृहदेश्वर मंदिर में भगवान शिव के नटराज रूप की मूर्तिमान अभिव्यक्त हुई है। यह अभिव्यक्ति तब हुई जब छठी शताब्दी में चोल राजवंश का साम्राज्य स्थापित हुआ था। कहते हैं कि चोल राजा स्वयं को प्रभावशाली रूप से जनता में स्थापित करना और स्वयं को परमात्मा से सीधे जोड़ना चाहते थे इसीलिए उन्होंने तंजावुर में वृहदेश्वर को स्थापित किया। फिर कालांतर में चोल वंश के कुल देवता भी नटराज ही हुए। नटराज के नाट्य और नृत्य मूर्तिमान स्वरूप को छठी शताब्दी में एलोरा और बादामी गुफाओं में उकेरा गया जो चोल राज्य काल में चार फीट की मूर्ति के रूप में अभिव्यक्त हुआ। इसी के बाद कालांतर में अंकोरवाट, बाली, कंबोडिया और मध्य एशिया में भी नटराज शिव की मूर्तिमत्ता स्वरूप की बड़े स्तर पर स्थापना हुई।

नटराज अवतरण का प्रसंग – स्कंद पुराण के अनुसार एक समय ऐसा हुआ कि वानप्रस्थी तपस्वी मोहमाया में वशीभूत होकर अपनी तप–शक्ति पर अहंकार करने लगे। अपने अहंकार में आकर वे शाप आदि देकर सामान्य जनता को भयभीत करने लगे। तब कैलाशपति भगवान शिव ने उन तपस्वी वानप्रस्थियों का मोह और अहंकार नष्ट करने का निश्चय किया। उन्होंने सामान्य भिक्षुक का वेश बनाया और जंगलों में विचरण करते हुए अभिमानी तपस्वियों के पास गए। उस समय उन तपस्वियों में जीवों की रचना और उनमें कौन सर्वश्रेष्ठ हैं इस विषय पर शास्त्रार्थ चल रहा था। शास्त्रार्थ में अपने अभिमान के वशीभूत होकर उन तपस्वियों ने स्वयं को ही सर्वश्रेष्ठ माना और किसी भी देवता या ईश्वर की पूजा का निषेध किया। ऐसे में भगवान शिव ने उन तपस्वियों के शास्त्रार्थ में विनम्रतापूर्वक सम्मिलित होकर उनके निर्णय को मिथ्या और झूठ सिद्ध कर दिया जिससे उन तपस्वियों के अहंकार को चोट पहुंची। इस चोट से तिलमिलाए तपस्वियों ने भिक्षुक वेशधारी शिव को दंडित करने का विचार किया। उन्होंने अपनी मंत्रशक्ति से कई भयानक सर्पों और राक्षस को उत्पन्न कर भिक्षुक बने शिव पर आक्रमण कर दिया।

ऐसा अहंकार और दुस्साहस देखकर क्रोधित भगवान शिव ने अपना रौद्र रूप धारण करके तांडव नृत्य प्रारंभ कर दिया। उस समय उनके शरीर पर बहुत सारे सर्प जगह–जगह लिपटे हुए थे और राक्षस उनके पैरों के नीचे कुचले जा रहे थे। इस रौद्र नृत्य–रूप को देख सभी तपस्वी बुरी तरह भयभीत हो उठे और भगवान के चरणों में गिरकर क्षमा याचना करने लगे। उन्होंने उस तांडव नृत्यरत भगवान के नटराज रूप की अभ्यर्थना, प्रार्थना और आराधना की। अंततः तपस्वियों का अहंकार पश्चाताप से विनय और भक्ति में बदलते देख भगवान नटराज का क्रोध शांत हुआ। तब तपस्वी ऋषियों ने शिव के नटराज रूप की पूजा–प्रतिष्ठा करते हुए उन्हें सृजन और संहार, नृत्य और नाट्य के देवता के रूप में समाज में प्रतिष्ठित किया। बहुत सरल और सहज ऐसी कथाएं अपने अंदर बहुत से निहितार्थ लिए होती हैं। ज्ञान के साधक तपस्वियों का जीवन और उनके ज्ञान–दर्शन का स्वरूप यदि भक्तिस्वरूपा न रहकर अहंकार निमग्न हो जाए तो स्वभावतः बहुत रूखा और उबाऊ हो जाता है। किंतु ज्ञान अहंकार और उबाऊपन को किसी भी तरह स्वीकार नहीं करता। सहज जीवन में राग–रंग, मोहक संगीत, नृत्य, नाट्य की रागात्मक शक्ति होती ही है किंतु जब इस सहज जीवन से उन वैरागी तपस्वियों का पांडित्य पराजित होता है तब जाकर वे भगवान नटराज की शरण में आने को विवश होते हैं।

भारतीय मनीषा इस लौकिक सृष्टि को दैवी रचना मानती है। नाट्य के संबंध में भी दैवी उत्पत्ति का सिद्धांत है जो भरतमुनि के नाट्यशास्त्र में सविस्तार वर्णित है। नाट्य के अधिष्ठाता देव भगवान नटराज जो महादेव के ही सर्जक–संहारक स्वरूप माने जाते है।

सृष्टि की दो शक्तियां हैं शिव और शक्ति। शिव का नटराज स्वरूप संहारक है, वे ही महाकाल हैं, 'तांडव' उन्ही की अभिव्यक्ति है। तांडव रौद्र रस, ओज शक्ति और गहन तीव्र

ISSN No. 2581-3528

गतिमत्तता का नृत्य है लेकिन स्वरूप पुरुष है और संहारक है शिव की शक्ति हैं– माता पार्वती, जिनके महाकाली स्वरूप में भी वही अभिव्यक्ति है जो शिव के तांडव रौद्र रूप में है। किंतु उनका रूप दया, करुणा, प्रेम और वात्सल्य का है इसलिए उनका नृत्य कोमल, सहज, लयबद्ध और सृजनात्मक है। लेकिन नृत्य के इष्टदेव के रूप में भगवान शिव के नटराज स्वरूप को ही माना जाता है जिनके तांडव में भरतमुनि की सभी नाट्यविधाएं विराजमान है। यह तांडव ब्रह्मांड के निर्माण, पालन और विघटन को अभिव्यक्त करता है।

नाट्य जगत के लिए विशिष्ट अर्थ संदेश- पौराणिक आख्यानों के अनुसार भगवान शिव की जटा से गंगा नदी बड़ी शक्तिमत्ता और वेगवती रूप में निकलती हैं जिनके आवेग को रोकने के लिए, शिव की जटाओं को नागराज पूरी शक्ति से कसकर बांधे रहते हैं। द्वितीया का अर्धचंद्र उनके बाएं सिर पर प्रकाशित और अवस्थित होता है और उनके गले में लिपटकर नागराज बड़ी नृत्यमयी मुद्रा में फन फैलाए दृश्यमान रहते हैं। सिर पर बालचंद्र जगत में शीतलता, गहन अन्धकार में आशा और प्रकाश का तथा विशिष्ट चंद्र–पंचांग और उसकी कालगणना का भी प्रतीक है। जटा–मुकुट में मानवीय खोपड़ी जैसी आकृति आसन्न काल और मृत्यु को भुलाकर जीवन के वर्तमान में आनंद नृत्य में निमग्न रहने का दर्शन प्रकट करता है। नृत्यमयी आवेग में जटाओं का सुगठित फैलाव और बिखराव जहां नटराज की गतिशीलता, ओज, आवेग को प्रदर्शित करता है वहीं मनोजगत के बिखराव, संजाल, जटिलताओं को समझने और उसे सकारात्मक रूप से संतुलित करने की शिक्षा भी देता है। नटराज यह संदेश देते हैं कि गले पड़ी कोई भी समस्या, समाधान का मार्ग भी हो सकती है।

भगवान नटराज के ऊपरी बाएं हाथ में अग्नि अवस्थित है जो संहार, विनाश, प्रलय का प्रतीक है। यही अग्नि भगवान नटराज की दाहिनी हथेली पर ऊर्जा की सकारात्मक शक्ति के संरक्षण और समुचित प्रयोग का अर्थ प्रकट करती है। जबकि ऊपर के दाहिने हाथ में विराजमान डमरू वाद्य तांडव नाद की गड़गड़ाहट, ताल, लय और विनाश का कारक है किंतु यही सृजन की ताल, लय और गति का भी साक्षात् स्वरूप है।

भगवान नटराज का निचला दायाँ हाथ जिसमें विषधर सर्प भी लिपटा हुआ, फन फैलाए दृश्यमान है, यह हाथ नकारात्मकता और विषम स्थिति में अभय या वरद–प्रदायी मुद्रा में है। यह मुद्रा जीवन–जगत के संघर्षों में जूझते जनमानस के लिए अभय देते हुए

कल्याणकारी भाव प्रकट करता है। सृष्टि और जीव–जगत के प्रति करुणा और आशीर्वाद की अभिव्यक्ति इस वरद हस्त से प्रत्यक्ष होती है।

भगवान नटराज का निचला बायाँ हाथ ठीक वरद हस्त के नीचे दंडहस्त या गजहस्त मुद्रा के रूप में अवस्थित हैं। यह हाथ भगवान की श्रीमूर्ति के हृदयस्थल को छुपाते दूसरी ओर तक जाता है और हथेली सामने की ओर किंतु नीचे झुकी हुई है। यह भक्त और जनसमुदाय के हृदय में बसे भय से उन्हें सुरक्षित रखने और उनके प्रति शरणागति का भाव प्रदर्शित करता है। इस हस्त से अपने भक्तों को शरण में आने की प्रेरणा देना भगवान नटराज के स्नेह एवं संरक्षण भाव का प्रतीक है।

नटराज की कई प्रतिमाओं की बाहों, कलाइयों और पैरों के पंजों के ऊपर मानो श्रृंगार और सजावटी रूप में बाल सर्प दिखाएं गए हैं। स्कंद पुराण की संबंधित कथा के अनुसार भिक्षुक के रूप में तपस्वियों के पास गए भगवान शिव को बांधने और हराने के लिए ये तपस्वियों द्वारा छोड़ी गई सर्प सेना का प्रतीक है। साथ ही बाजूबंद, कलाई, कमर और पैरों के टखनों में लिपटे सर्प उस नकारात्मक शक्ति का प्रतीक हैं जो हमारे शरीर के जोड़ों को जाम करके आलसी बनाती है। उस नकारात्मक शक्ति की जकड़न को हम सकारात्मकता, गतिशीलता, सक्रियता, उन्मुक्तता और विशेषतः आनंदमयी नृत्य भाव से ही पराजित कर सकते है यह संदेश देता है।

नटराज के नृत्य की व्याख्या वास्तव में हमारे जीवन की गति में आनंद की भावना है। सृष्टि के रहस्य चाहे कितने गहरे हों और उसे अभिव्यक्त करने के लिए भगवान नटराज की साक्षात् मूर्तिमत्ता हमारे समक्ष साकार होती है और बताती है कि जीवन आनंदमय है। इसे आनंद नृत्य के साथ जिया जाना चाहिए यही नटराज के तांडव स्वरूप का दार्शनिक संदेश है।

नाट्य में समूचे जगत के जीवन और उसके विविध पक्षों की अभिव्यक्ति हो सकती है पर वह अपनी सुनिश्चित धुरी पर गतिमान होते हुए इतना हल्का हो जाए कि कमल की कोमलतम पंखुड़ियों की तरह हमारी कोमल मानवीय भावनाएं– प्रेम, दया, करुणा, सहयोग, सामंजस्य जैसे भाव सुरक्षित और निर्लिप्त बने रहें। हमारी नाट्य प्रकृति सकारात्मकता को सुरक्षित और नकारात्मकता को कुचलते हुए आनंद भाव लाती है ।

भगवान शिव का नटराज स्वरूप और तांडव भाव नाट्यविधा के प्रकृति के सभी भावों की शिक्षा देती है।

(लेखक - संपादक, समकालीन कला, ललित कला अकादमी, संस्कृति मंत्रालय)

मीडिया सुर्खियां (21 जुलाई, 2022 - 20 अगस्त, 2022)

21 जुलाई : सुप्रीम कोर्ट ने अक्टूबर के पहले सप्ताह में ज्ञानवापी मस्जिद से संबंधित मामले की सुनवाई के लिए आगे की तारीख तय की जो पहले से ही उसके समक्ष लंबित है।

22 जुलाई : भारत के पूर्व कप्तान सुनील गावस्कर पहले भारतीय क्रिकेट खिलाड़ी बनने जा रहे हैं जिनके नाम से इंग्लैंड में क्रिकेट स्टेडियम होगा।

23 जुलाई : विश्व स्वास्थ्य संगठन ने कहा कि 70 से अधिक देशों में मंकीपॉक्स का प्रसार होना एक "असाधारण" हालात है जो अब वैश्विक आपात स्थिति है।

24 जुलाई : राष्ट्रपति रामनाथ कोविंद का देश के नाम आखिरी संबोधन, बोले–भारत का लोकतंत्र सभी को मौका देता है।

25 जुलाई : द्रौपदी मुर्मू ने आज देश के 15वें राष्ट्रपति के तौर पर पद और गोपनीयता की शपथ लीं। देश के मुख्य न्यायाधीश ने उन्हें संसद भवन के सेंट्रल हॉल में शपथ दिलाई।

26 जुलाई : दिल्ली के उपराज्यपाल वीके सक्सेना ने एक बार फिर से भ्रष्टाचार के खिलाफ सख्त कार्रवाई की है। उन्होंने भ्रष्टाचार और आधिकारिक पद का दुरुपयोग करने के आरोप में दिल्ली नगर निगम के छह अधिकारियों को निलंबित करने का आदेश दिया है।

27 जुलाई : दिल्ली में विहिप और आरएसएस के कार्यालयों को बम से उड़ाने की धमकी मिलने के बाद सनसनी फैल गई। विहिप के कार्यालय में दाखिल हुए एक व्यक्ति ने कार्यालयों को बम से उड़ाने की धमकी दी।

28 जुलाई : भारतीय नौसेना ने स्वदेशी विमान वाहक विक्रांत की डिलीवरी लेकर इतिहास रच दिया। इसे आईएनएस विक्रांत के रूप में शामिल किया जाएगा। इसमें 76 प्रतिशत सामग्री स्वदेशी है। यह आत्मनिर्भर भारत के लिए एक आदर्श उदाहरण है।

29 जुलाई : PM नरेंद्र मोदी ने अंतरराष्ट्रीय वित्तीय सेवा केंद्र प्राधिकरण की आधारशिला रखी और इंडिया इंटरनेशनल बुलियन एक्सचेंज का उद्घाटन किया। उन्होंने गुजरात इंटरनेशनल फाइनेंस टेक सिटी में कहा कि भारत दुनिया की अग्रणी अर्थव्यवस्थाओं में से एक है।

30 जुलाई : आरबीआई के पूर्व गवर्नर रघुराम राजन ने भारतीय रिजर्व बैंक की तारीफ करते हुए कहा कि विदेशी मुद्रा भंडार बढ़ाने का अच्छा काम किया। साथ ही उन्होंने कहा कि भारत को श्रीलंका और पाकिस्तान जैसी आर्थिक समस्याओं का सामना नहीं करना पड़ेगा।

1 अगस्त : कानपुर के एक निजी स्कूल में हिंदू छात्रों से प्रार्थना में कलमा पढ़ाए जाने का मामला सामने आया है। अभिभावकों के विरोध करने पर स्कूल ने कहा है कि अब प्रार्थना में केवल राष्ट्रगान गाया जाएगा।

2 अगस्त : छत्तीसगढ़ सरकार ने 3 ऐतिहासिक शहरों के नाम बदलने का फैसला किया है। अब चंदखुरी को माता कौशल्याधाम चंदखुरी, गिरौदपुरी को बाबा गुरु घासीदास धाम गिरौदपुरी और सोनाखान को शहीद वीरनारायण सिंह धाम सोनाखान के नाम से जाना जाएगा।

3 अगस्त : फिरोजाबाद में एक घोटाला सामने आया है। प्राइमरी स्कूल के प्रिंसिपल ने शिक्षा विभाग और बैंक कर्मचारियों के साथ मिलकर मिड–डे मील के 11.46 करोड़ रुपये का गबन कर लिया। यह मामला 2008 से 2014 के बीच का है।

4 अगस्त : भारतीय नौसेना के INAS–314 के 5 अधिकारियों ने डोर्नियर 228 विमान में सवार होकर उत्तरी अरब सागर में पहला सर्व–महिला स्वतंत्र समुद्री टोही और निगरानी मिशन पूरा कर इतिहास रच दिया।

5 अगस्त : जम्मू कश्मीर से अनुच्छेद 370 को हटाए आज 3 साल पूरे हो गए हैं। बीते तीन साल से जम्मू कश्मीर की तस्वीर लगातार बदल रही है। सालों से अटके काम अब तेजी से पूरे हो रहे हैं।

6 अगस्त : उपराष्ट्रपति चुनाव में मिली जीत पर जगदीप धनखड़ को राष्ट्रपति द्रौपदी मुर्मू, पीएम नरेंद्र मोदी, कांग्रेस की अंतरिम अध्यक्ष सोनिया गांधी समेत कई नेताओं ने बधाई दी।

7 अगस्त : नुपुर शर्मा का समर्थन करने वालों पर हमले रुक नहीं रहे हैं ऐसे ही एक अटैक में महाराष्ट्र के अहमदनगर का एक युवक बुरी तरह घायल हो गया है जिसका नाम प्रतीक पवार है।

8 अगस्त : देश की सबसे बड़ी दूरसंचार कंपनी जियो ने करीब 1,000 शहरों में 5जी सेवाएं शुरू करने की तैयारियां पूरी करने के साथ स्वदेश में विकसित अपने 5जी दूरसंचार उपकरणों का परीक्षण भी किया है।

9 अगस्त : PMO ने प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी की संपत्ति से जुड़ी जानकारी शेयर की है। पीएमओ के अनुसार, पीएम के पास 2.23 करोड़ रुपये की संपत्ति है।

10 अगस्त : नूपुर शर्मा ने सुप्रीम कोर्ट से अपने सभी केस दिल्ली ट्रांसफर करने की अपील की थी इस मामले पर सुप्रीम कोर्ट ने नूपुर शर्मा को बड़ी राहत देते हुए सभी केसों की सुनवाई दिल्ली में करने का आदेश दे दिया है।

11 अगस्त : जम्मू और कश्मीर के राजौरी के परगल में आतंकवादियों से लड़ते हुए राइफलमैन निशांत मलिक शहीद हो गए। भारतीय सेना प्रमुख जनरल मनोज पांडे और सभी रैंक ने आखिरी सलाम पेश किया।

12 अगस्त : उत्तर प्रदेश के आतंकवाद निरोधी दस्ते ने जैश–ए–मोहम्मद और तहरीक–ए–तालिबान पाकिस्तान से जुड़े आतंकवादी मुहम्मद नदीम को सहारनपुर से गिरफ्तार किया। एजेंसी के मुताबिक, नदीम पाकिस्तान स्थित आतंकी संगठन जैश–ए–मोहम्मद और टीटीपी के सीधे संपर्क में था।

13 अगस्त : चंडीगढ़ में बनाया गया 'तिरंगा' वर्ल्ड रिकॉर्ड, 7500 स्टूडेंट्स ने बनाया सबसे बड़ा ह्यूमन फ्लैग। गुजरात के गांधीनगर में पीएम नरेंद्र मोदी की मां हीराबेन मोदी ने बच्चों को राष्ट्रीय ध्वज बांटे और तिरंगा फहराया।

15 अगस्त : आजादी के जश्न में डूबा पूरा देश। कश्मीर से लेकर कन्याकुमारी तक जश्न का माहौल। पीएम नरेन्द्र मोदी ने लाल किले पर फहराया तिरंगा। पीएम मोदी ने अपने सम्बोधन में कहा कि आजादी की जंग में गुलामी का पूरा कालखंड संघर्ष में बीता। हिंदुस्तान का कोई कोना और कोई काल ऐसा नहीं था, जब देशवासियों ने सैकड़ों साल तक जंग न लड़ी हो, यातनाएं न झेली हों। आज हम सब देशवासियों के लिए ऐसे हर महापुरुष को नमन करने का अवसर है।

16 अगस्त : जम्मू एवं कश्मीर के शोपियां जिले में आतंकवादियों ने एक स्थानीय कश्मीरी पंडित की हत्या कर दी और उसके भाई को भी घायल कर दिया। मृतक का नाम सुनील कुमार है।

18 अगस्त : जम्मू और कश्मीर को लेकर मोदी सरकार ने एक और ऐतिहासिक फैसला किया है। राज्य में अब वह सभी लोग अपना वोट डाल सकेंगे, जो वहां पर बाहर से आकर बस गए हैं और उनके पास निवास प्रमाण पत्र नहीं है।

19 अगस्त : शराब घोटाला मामले में सीबीआई ने दिल्ली के डिप्टी सीएम मनीष सिसोदिया सहित 15 लोगों के खिलाफ एफआईआर दर्ज की। 120–B, 477–A और सेक्शन 7 के तहत FIR दर्द की गई है।

20 अगस्त : UP के लखनऊ में भूकंप के झटके, रिक्टर स्केल पर 5.2 मैग्नीटयूड दर्ज की गई तीव्रता।

संयोजन : प्रतीक खरे

सरस्वती शिशु मन्दिर

सी–41, सेक्टर–12, नोएडा, गौ.बु. नगर (उ.प्र.)

दूरभाष: 0120–4545608

ई–मेल: ssm.noida@gmail.com

वैबसाइड: www.ssmnoida.in

विद्यालय की विशेषताऐं

* भारतीय संस्कृति पर आधारित व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास का प्रयास।
* नवीन तकनीकी शिक्षा प्रोजैक्टर, कम्प्यूटर, सी.सी.टी.वी., कैमरा आदि की सुविधा।
* आर.ओ. का शुद्ध पेय जल, सौर ऊर्जा, विशाल क्रीड़ा स्थल व हरियाली का समुचित प्रबन्ध।
* प्रखर देशभक्ति के संस्कारों से युक्त उत्तम मानवीय व चारित्रिक गुणों के विकास पर बल।
* सामाजिक चेतना एवं समरसता के विकास के लिए विविध क्रियाकलाप।
* विद्यालय को श्रेष्ठतम बनाने की दृष्टि से आपके सुझाव सादर आमन्त्रित हैं।

मधुसूदन दादू	प्रदीप भारद्वाज	असित त्यागी	प्रकाश वीर
(अध्यक्ष)	(व्यवस्थापक)	(कोषाध्यक्ष)	(प्रधानाचार्य)

BHAURAV DEVRAS
SARASWATI VIDYA MANDIR

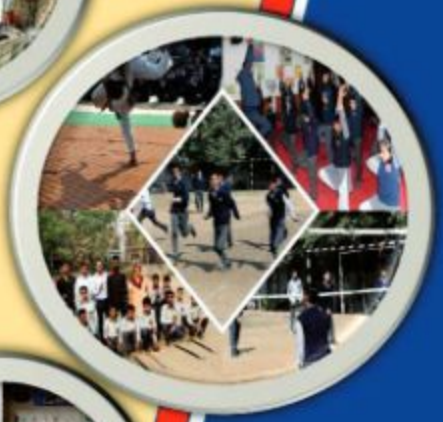

- Rich Library
- Atal Tinkering Laboratory
- Well Equipped Laboratories
- Sports Activities
- Studio for Smart Education
- Huge Hall
- Easy Transport options from most suburbs
- Unique & Innovative Programs
- Modern Resources & Technologies

H-107, Sector-12, NOIDA
E-Mail: bdsvidyamandir@gmail.com
Contact No. 0120-2536903, 9910665195